श्री श्वे० स्था० जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा का ५०वां पुष्प

सोहन काव्य-कथा मंजरी

भाग ७

卐

प्रकाशक :
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा-३११०२१ (राज.)

रचनाकार :
स्वाध्याय-शिरोमणि, आचार्यप्रवर
श्रद्धेय सोहनलालजी म. सा.

卐 सोहन काव्य कथा मंजरी
भाग-७
(२९ चरित्रों का संग्रह)

卐 रचनाकार :
आचार्यप्रवर, श्रद्धेय सोहनलालजी म. सा.

卐 सम्पादक :
प्रवचन-प्रभाकर, श्री वल्लभमुनिजी म. सा.

卐 प्रथम संस्करण :
दिसम्बर १९९५

卐 मूल्य :
लागत मूल्य १३-०० रु.

卐 अर्थ सौजन्य :
श्रीमान् प्रेमचन्दजी
नवीनकुमारजी तातेड़, बिजयनगर

卐 मुद्रक :
मंगल मुद्रणालय
३/९ गंज, महावीर सर्किल
अजमेर।

卐 प्रकाशक :
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा (राज.)

प्रकाशकीय

साहित्य की विधाओं में कथा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि स्वयं मानव-सृष्टि।

जब दो व्यक्ति मिलते हैं एवं परस्पर कुशल-क्षेम के समाचार पूछते हैं, तब वे अपनी कहानी ही कहते हैं या सुनाते हैं। यही कहानी का उद्‌गम स्रोत है।

तब से अब तक इस कहानी ने एक लंबी दूरी की यात्रा तय की है। कथा से कहानी, फिर लघुकथा व बोधकथा के रूप में विकसित होकर अब वह अ-कहानी की सीमा को स्पर्श करने लगी है।

किसी भी आयु के व्यक्ति के लिए कहानी सुनना या पढ़ना आनन्ददायक होता है। अपने देश में ही दादी-नानी के द्वारा कहानी कहने-सुनने की परम्परा चली आ रही है। शिक्षितों और अशिक्षितों में समान रूप से कहानी की विधा लोकप्रिय है। विविध घटनाक्रम के साथ संजोए गए पात्रों के गतिमान जीवन के माध्यम से मानो पाठक अपने ही जीवन की कहानी पढ़ता है। वह घटना भी अपनी बात कहकर पाठक के मन में निराकार रूप से पैठकर उसे आन्दोलित करती रहती है अतः उसकी अनुगूंज तो लम्बे समय तक सुनाई पड़ती रहती है। इस प्रकार कहानी जीवन से जुड़कर जीवन मूल्यों की समृद्धि का माध्यम बनती है।

कथा का मूल आधार घटना का चमत्कार होता है तथा घटना-चमत्कार किसी धार्मिक, नैतिक या साहसिक मूल्य की स्थापना करता है। अति प्राचीनकाल में लिखी गई पंचतंत्र, हितोपदेश, वेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि की कथाएं नीति की शिक्षा प्रदान करनेवाली रही हैं जिससे व्यक्ति व समाज के जीवन को एक दिशा मिली है। इनमें वर्णित व्यक्ति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज के एक प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता है इसलिए पाठक उसके जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर पाते हैं। यद्यपि कथा का प्रस्थान बिन्दु व्यक्ति है किन्तु गन्तव्य तो समाज ही होता है।

इस कथा-शिल्प के साथ यदि काव्यात्मकता का भी मधुर मेल हो जाय तो सोने में सुगन्ध आ जाती है। गेयत्व का मेल होने के कारण, माधुर्य में अभिवृद्धि होने से उसकी प्रभावशीलता द्विगुणित होकर पाठक के मन पर स्थायी असर कर जाती है।

प्रस्तुत काव्यात्मक कथा-संकलन के कथाशिल्पी विद्वद्वरेण्य, परमश्रेष्ठ, मधुरवक्ता आशुकवि आचार्यप्रवर, गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म. सा. एक ऐसे ही अमर कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से तर्कजाल की भांति उलझे हुए मनुष्य के मन की समस्याओं को सुलझाया है, सांसारिक व्यामोह से उसे मुक्तकर मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति से उसे सम्पन्न बनाया है और इस प्रकार स्वस्थ, अनासक्त एवं समर्पित व्यक्ति का तथा शुद्ध आचार वाले समाज का निर्माण किया है।

वि. सं. २०४४ का वर्ष श्री स्वाध्यायी संघ के आद्य-संस्थापक, राजस्थान-केसरी, श्रद्धेय गुरुवर्य श्री पन्नालालजी म. सा. का जन्मशती वर्ष था। इसी समय, हमारी आस्था

के केन्द्र स्वाध्याय-शिरोमणि, श्रद्धेय गुरुवर्य आचार्य श्री सोहनलालजी म. सा. ने अपने जीवन के ७७वें वसन्त में प्रवेश कर अपने महिमा-मंडित जीवन से हमें गौरवान्वित किया है। इसी वर्ष पूज्य गुरुवर्य द्वारा समुपदिष्ट श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा ने भी अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूरे किए हैं। इस प्रकार यह त्रिवेणी-संगम हम सभी के लिए परम हर्ष का विषय रहा है।

पूज्य गुरुदेव के अनुयायी भक्तों की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके अब तक के प्रकाशित व अप्रकाशित काव्यात्मक कथानकों को—जो लगभग ३०० से भी अधिक हैं—क्रमशः प्रकाशित कराया जाय ताकि पाठक उनसे समुचित लाभ उठा सकें एवं साहित्य के अनुसंधित्सुओं के लिए भी पथचिह्न बन सकें। वर्तमान दूषित वातावरण में युवकों को सत्साहित्य उपलब्ध नहीं होने से वे घटिया एवं चरित्रहन्ता साहित्य पढ़कर अपना समय नष्ट करते हैं। उन्हें भी व्यवहार व धर्मनीतिपरक साहित्य सुलभ कराना भी इसका एक उद्देश्य रहा है।

सोहन काव्य कथा मंजरी के ६ भाग दिसम्बर १९९४ तक प्रकाशित हो चुके हैं, जिन्हें पाठकों ने काफी सराहा है। इसका यह सातवां पुष्प पाठकों को सादर समर्पित करते हुए परम हर्ष है।

इस संकलन को तैयार करने में वि. सं. २०५० का चातुर्मास हमारे लिए स्मरणीय है। परमश्रद्धेय, आचार्यप्रवर श्री सोहनलालजी म. सा. ठाः ६ के चातुर्मास का अजमेर क्षेत्र को सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसी चातुर्मास में इस काव्यकृति का संकलन व संपादन किया गया था। इस संकलन को तैयार करने में हमें ओजस्वी वक्ता, प्रखर प्रतिभा के धनी, प्रवचन प्रभाकर श्रद्धेय वल्लभमुनिजी म. सा. का हार्दिक सहयोग मिला जिन्होंने आद्योपान्त सभी कथानकों को पढ़कर आवश्यकीय सुझावों से लाभान्वित किया है।

हमारी भावना थी कि श्रद्धेय प्रवचन प्रभाकर श्री वल्लभमुनिजी म. सा. के समक्ष ही उनके परिश्रम की फलश्रुति प्रस्तुत हो पाती किन्तु एकाधिक अपरिहार्य कारणों से प्रकाशन में विलम्ब होता गया एवं श्रद्धेय वल्लभमुनिजी म. सा. को आसोज सुदी १२ सं. २०५० के दिन काल ने हमसे छीन लिया। हम सभी निरुपाय रहे। आज उनके परिश्रम की यह सातवीं कड़ी आप सभी के समक्ष प्रस्तुत करने का सुअवसर मिल सका है, इसके लिए हम पूज्य गुरुवर्य की कृपा के ऋणी हैं।

श्रीमान् प्रेमचन्दजी नवीनकुमारजी तातेड़ (राताकोट वाले) हाल मुकाम विजयनगर वालों ने अपने पिताश्री श्रीमान् मोहनलालजी सा. तातेड़ की पुण्य स्मृति में अपनी मातेश्वरी श्रीमती रसालकंवरजी तातेड़ की ओर से अर्थ सहयोग प्रदान कर इसका प्रकाशन कराया है। अतः हम उनके आभारी हैं।

आशा है पाठकगण इस काव्य कथामाला से लाभ प्राप्त कर जीवन में नैतिकता विकसित करेंगे, इसी विश्वास से—

—नेमीचन्द खाविया
मंत्री
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ

गुलाबपुरा
दि. १ दिसम्बर १९९५

भूमिका

जीवन की शिक्षा जीवन से ही संभव है। छोटी-छोटी कथाओं के माध्यम से जीवन अनुभवों को प्रस्तुत करके जीवन की शिक्षा देने की सुदृढ़ परम्परा हमारे देश में विद्यमान है। इतिहास-पुराण आदि में ऐसी अनेक कथाएं मिलती हैं। बौद्ध-परम्परा में जातक-कथाएं हैं तो जैन-परम्परा में भी ऐसी कथाओं का प्राचुर्य है। हितोपदेश, पंचतंत्र, वृहत्कथा, कथासरित्सागर, सहस्ररजनीचरित, शुकसप्तति, सिंहासन द्वात्रिंशिका, वेताल पंचविंशतिका आदि प्राचीन कथासंग्रह मनोरंजक भी हैं और प्रेरणाप्रद भी।

इनकी कथाओं को अलग-अलग प्रसंगों में अलग-अलग भंगिमाओं के साथ प्रस्तुत करने के प्रयास हुए हैं। नई-नई कथाएं जुड़ती रही। कहीं पुरानी कथाओं का नवीनीकरण किया गया। प्रसंग बदल गया, कथा का उद्देश्य भी बदल गया, पर उसकी संरचना जिस मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन करने के लिए हुई थी, वह यथावत् रहा।

प्रस्तुत संकलन में छोटी-छोटी कथाएं पद्य-बद्धरूप में प्रस्तुत की गई हैं। इन कहानियों में रचनाकार, गुरुवर्य, आचार्य प्रवर श्री सोहनलालजी म. सा. ने जीवन के सहज सत्य को नए आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रत्येक कथा अध्यात्म की उन ऊंचाइयों का स्पर्श कराने वाली है जिन्हें आज की भाषा में नैतिकता कहते हैं। भौतिक संसार की नश्वरता को कवि ने जीवन का स्वप्न कहा है। निद्रा का स्वप्न आंख खुलने पर मिट जाता है और जीवन-स्वप्न आंख मींचने पर विरला जाता है। कवि अपनी प्रत्येक कथा में इस शाश्वत सत्य को विभिन्न उपमाओं, रूपकों व दृष्टान्तों से जब प्रस्तुत करते हैं तो मन मोहित हो जाता है। काव्य की सहज प्रांजल भाषा ने इनके कथ्य को सुबोध एवं सहज ग्राह्य बना दिया है।

बात तो कोई भी कह सकता है, पर बात ऐसी हो जो जमे। सुनने वाले को विश्वसनीय लगे, तब वह सुनी जायेगी। अन्यथा तो सुनकर भी उसे अनसुना कर दिया जायगा। ये कहानियां सुनने योग्य हैं, पढ़ने योग्य हैं और स्मरण करने योग्य भी हैं। इसमें जीवन के सत्य के साथ एक चिन्तक एवं कवि-हृदय सन्त का अनुभव भी बोलता है। पूज्य, आचार्य प्रवर, गुरुदेवश्री जीवन के एक तटस्थ दृष्टा हैं। आसक्ति से परे, रागद्वेष से रहित उनके हृत्फलक पर संसार के स्वरूप के जो बिम्ब उभरे हैं, वे हृदय-स्पर्शी हैं। कवि जब निर्लिप्तभाव से अपने उन अनुभवों को शब्दों में आकार प्रदान करता है तो ऐसा लगता है मानों शुष्क दार्शनिक नहीं वरन् जीवन की गहराई में डूबा कोई योगी बोल रहा है। ये कथाएँ इसलिए मर्मस्पर्शी तो हैं ही, पठनीय एवं मननीय भी हैं।

अच्छी कहानी के दो गुण होते हैं—एक संकेत (Suggestion) और दूसरा गूंज (Echo)। इन दो गुणों के माध्यम से कथा का मनोवैज्ञानिक सत्य परिपुष्ट होकर प्रकट होता है। ये कथाएं इन दोनों गुणों से समन्वित हैं। एक बार सुनने या पढ़ने के बाद इनकी गूंज लंबे समय तक श्रोता या पाठक के मन को तरंगित करती रहती है। आचार्य-प्रवर को लोक हृदय की अच्छी परख है, उनकी सूझ गहरी एवं निरीक्षक दृष्टि पैनी है इसलिए प्रत्येक कथा सामाजिकों के गुह्यतम हृदय-प्रदेशों तक पहुंच कर एक विशिष्ट प्रभाव छोड़ती है।

आचार्यप्रवर ने जीवन के सत्य का उद्घाटन भी अनुभवों के फलक पर बखूबी किया है। जब वे कहते हैं—कर्म बांधणो सरल जगत में भोग नव दुःख प

नं. २) तब ऐसा लगता है मानों वे हमारे ही अनुभूत सत्य को प्रकट कर रहे हैं। 'जैसा लावै वैसा पावे—पुण्य और पाप' एवं 'सोहन मुनि, जो संदेह लाता, जाता करणी हार' में भी कविवर ने शाश्वत जीवन सत्य के मर्म को स्पर्श किया है। इस सूक्ष्मता के कारण प्रायः सभी कथाएं जहां उपदेशक हैं वहीं वे सूक्ष्म दार्शनिकतायुक्त उच्च नैतिकता से साक्षात्कार भी कराती हैं।

मनोवैज्ञानिक सचाई को भी कवि ने खूब पकड़ा है। 'जिस कार्य को करने के लिए इन्कार किया जाता है, मन उस ओर विशेष आकर्षित होता है।' कवि ने इस सत्य को प्रथम कथा में ही प्रकट कर दिया है।

कथाओं के द्वारा जैन शासन के मूल-सूत्रों को अतीव सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। सिद्धान्तों की रुक्षता को कथानकों की कमनीयता से कम किया गया है। ऐसी शैली को आज की भाषा में अप्रत्यक्ष उपदेश (Indirect Preaching) कहा जाता है। इसे शिक्षण की सर्वोत्तम विधि माना जाता है। कवि का कथाकार व उपदेशक का रूप इस प्रकार परस्पर गुम्फित हो गया है कि उन्हें अलग करके नहीं देखा जा सकता। सर्वत्र कवि ने कहकर नहीं वरन् वैसा जीवन जीकर सिखाया है अतः प्रत्येक कथा की प्रभावोत्पादकता बढ़ गई है।

अन्य कथानकों की भांति प्रस्तुत संग्रह में भी राधेश्याम रामायण, लावणी बड़ी, द्रोण, लावणी छोटी, कोरो काजलियो, सदृश लोकतर्जों का उपयोग किया है वहीं नेमजी की जान बनी भारी, एवन्तामुनिवर नाव तिराई बहता नीर में, हो भवियण शरणा चार जैसी जैन समाज में प्रचलित विशुद्ध भावपूर्ण तर्जों पर भी रचनाएं की हैं। इन लोकप्रिय धुनों में गेयकाव्य को इतनी कुशलता से बांधा है कि पाठक व श्रोतागण भी उनके साथ ही भावविभोर होकर गा उठता है।

जहां तक भाषा का प्रश्न है, कथाओं की भाषा काव्य-भाषा है। कहीं भी दुरूहता नहीं, शब्दों की तोड़-मरोड़ नहीं। आलंकारिक छटा भी है किन्तु वह सायास नहीं—सहज है। रचनाकार सिद्धहस्त कवि हैं। आपकी भाषा पर स्थानिकता का भी प्रभाव है अतः लार (साथ में) भायां (भाई), घणा (बहुत), वांरो (उनका), चहुंकानी (चारों तरफ), धूलधाणी होना (व्यर्थ हो जाना) आदि शब्दों का प्रयोग सहजरूप से हो गया है। करज्यो रे, डरज्यो रे आदि क्रियापदों का प्रयोग कवि की पाठक के साथ गहरी आत्मीयता को सूचित करता है। सरल, सुबोध भाषा में आप द्वारा रचित अनेक काव्यकृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। आचार्य श्री धर्म के गूढ़ रहस्यों को काव्य-कथाओं की मनोमुग्धकारी शैली में बालघुट्टी की तरह प्रस्तुत कर रहे हैं। कथा का चमत्कार पूर्ण प्रवाह और काव्य की मीठास इसमें एक साथ विद्यमान है। गेयता इनका अतिरिक्त गुण है। अब पाठकों और श्रोताओं का काम है कि इन काव्य कथाओं को पढ़ें, सुनें, गुनगुनायें और इनमें संकेतित जीवन-मूल्यों को जीवन में धारण करें। तभी इनकी रचना का श्रम सार्थक होगा।

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली
एम. ए., पीएच. डी.
पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष
राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

अजमेर
दिनांक १ नवम्बर १९९५

श्रीमती रसालकंवरजी तातेड़



श्रीमान् प्रेमचन्दजी नवीनकुमारजी तातेड़ विजयनगर वालों के द्वारा अपने पिताश्री धर्मनिष्ठ, सुश्रावक श्रीमान् मोहनलालजी सा. तातेड़ की पुण्य स्मृति में, अपनी मातेश्वरी श्रीमती रसालकंवरजी तातेड़ की प्रेरणा से प्रकाशित करवाकर भेंट।



१ | लोहो सव्व विणासणो

[तर्ज : लावणी]

यह काम पिपासा कितनी, है दुखकारी,
तुम सुनो लगाकर ध्यान सभी नर नारी ।।टेर।।

इक चम्पापुरी में बसे, बड़े व्यापारी, उनमें माकंदी नामा सेठ बहुत धनधारी ।
था लक्ष्मी का नहीं पार, जगत में जहारी, जिनरक्ष और जिनपाल पुत्र गुणधारी ।।
पढ़ लिखकर लीनी दोनों, खूब हुशियारी ।।१।।

जहाजों में भरकर माल, बेचने जावे, लवण समुद्र में ग्यारह बार फिर आवे ।
खूब कमा कर सम्पति, घर में लावे, पर तृष्णा मन से कम नहीं होवे पावे ।
धन पाये जान को जोखिम मांही डारी ।।२।।

इक वक्त भ्रात दोनों यों, मन में धारी, हम चलें माल भर पोत समुद्र मंझारी ।
पिता पास आ कही, हकीकत सारी, धन लेने जावे पोत समुद्र में डारी ।।
अतः इजाजत मिले हमें इस वारी ।।३।।

पिता कहे लक्ष्मी की, कमी है नाँहीं, फिर क्यों करते हो लोभ तजो सब भाई ।
यह समुद्र यात्रा खतरे, वाली कहाई, अतः करो संतोष हिया के माँही ।।
पुत्र कहे जाने की इच्छा हमारी ।।४।।

बारहवीं बार नहीं जाना, पिता समझावे, पर जँची हिये में और बात नहीं आवे ।
जहाजों में भरकर माल समुद्र में जावे, अधबिच आया तूफान जहाज फट जावे ।।
डूब गई जो लाया सम्पत्ति सारी ।।५।।

दोनों भ्रात के हाथ पाटिया आया, तिरकर दोनों रत्नद्वीप को पाया ।
भूखे थे फल तोड़ तोड़ कर खाया, मिटी भूख तब बैठे तरु की छाया ।।
आई रतना देवी वहां उस वारी ।।६।।

कर क्रोध उन्हें फिर देवी ने ललकारा, हो जावो तैयार चले असिधारा ।
क्यों आये लेकर मृत्यु अपनी लारा, सुन वाणी दुःखित हो मुख से यों उच्चारा ।।
मृत्यु मुक्त कर, दो आज्ञा इस वारी ।।७।।

हँस कर बोली करी परीक्षा थांरी, चलो महल में मिले सभी तैयारी।
ले गई महल में भोगे भोग सुखकारी, भोगों से हो गये तंग हिया में धारी॥
फंस गये हैं फंदे मांय हुआ दुख भारी ॥८॥

सुस्थित देव इन्द्र आज्ञा फरमाई, लवण समुद्र की जल्दी होय सफाई।
रतना देवी को जाकर दो दरसाई, आज्ञा को जाकर दीनी उसे सुनाई॥
सोचे इन्द्र की आज्ञा टरे ना टारी ॥९॥

दोनों कंवर को देवी यों दरसावे, मैं जाऊँ काम पर आज्ञा इन्द्र की आवे।
सुख में रहो जहाँ जैसा चित्त में चावे, पर दक्षिण बाग मत जाय सर्प खा जावे॥
तीनों दिशा में फिरो स्वेच्छा धारी ॥१०॥

गये बाद में घूमे बगीचे माँही, रमणिकता लख रहे दिल में अति हरसाई।
देवी ने दक्षिण की कैसे करी मनाई, चलो देख लें क्या है रहस्य उस माँही॥
देखा अस्थि ढेर दुर्गन्ध है भारी ॥११॥

आगे शूली पर मानव चढ़ा दिखाया, दोनों भ्रात चल उनके पास में आया।
पूछी बात तब उसने यों दरसाया, म्हारी दशा ज्यों थारी होसी भाया॥
भोगों में चूस तन, दे शूली हत्यारी ॥१२॥

सुन करके मन दोनों का कम्पाया, कैसे बचे हो उपाय कहो अब भाया।
बचे वही जो होवे भाग्य सवाया, नहीं वो देखो हड्डी ढेर लगाया॥
मोह माया का जाल बिछासी भारी ॥१३॥

अष्टम चौदस प्राची बाग में जावे, वहाँ यक्ष अश्व का रूप धारकर आवे।
तारू पार उतारूँ शब्द लगावे, उस वक्त पार होने की जो दरसावे॥
बैठा पीठ पर देता पार उतारी ॥१४॥

आठम के दिन दोनों बाग में आया, यक्ष शब्द सुन मन माँहि हरसाया।
करो कष्ट से पार आप यक्ष राया, शर्त मेरी यह लेना ध्यान में भाया॥
भोगों से मन को मोड़े वही हो पारी ॥१५॥

विचलित हो गये भाव उसी क्षण माँही, दूँगा डाल मैं फिर नहीं करूँ सुनाई।
मानी शर्त तब उड़ गया पीठ बिठाई, उस क्षण देवी ने देखा ज्ञान लगाई॥
जा रहे समुद्र में गगन गति इस चारी ॥१६॥

आ गई पास में रोष करी बतलावे, कहो त्याग कर मुझको कहां सिधावे।
कई तरह से हाव भाव बतलावे, अडिग रहा जिनपाल सुने न सुनावे॥
कितना मोह है जिन रख ने यों धारी ॥१७॥

जिन रक्ष का मानस सुनकर गया ललचाई, अतः देवी आ मीठी वात सुनाई।
एक वक्त तो देखो आँख उठाई, मन चला तत्क्षण दीना यक्ष गिराई ।।
गिरते ही देवी ने लीनी सद्य दुधारी ।।१८।।

झेल नोंक पर खंड खंड कर दीना, जो अचल भाव से रहा स्थान जा लीना।
मात पिता से मिली हाल कह दीना, काम भोग में फंसा वही दुख लीना ।।
अतः विषय से बचो सदा गुणधारी ।।१९।।

ज्ञाता सूत्र का नौवा अध्ययन है भाई, सुणी सुगुण नर लेवो हिये जमाई।
जिनपाल रहा मजबूत सुक्ख लिया पाई, भोगों में फंसकर जिन रख जान गंवाई ।।
अतः ज्ञानी वचनों को लेवो धारी ।।२०।।

'प्राज्ञ' प्रसादे सोहन मुनि दरसावे, काम भोग से बचो यदि सुख चावे।
दो हजार छत्तीस फतेहगढ़ आवे, महीना माघ सुद सातम गुरु मन भावे ।।
श्री संघ यहां का है अति साता कारी ।।२१।।



२ | कर्म-कथा

[तर्ज : उमर छोटी सी ......]

भाया सुणज्यो रे ई कर्म कथा पर ध्यान लगाज्यो रे ।।टेर।।

कर्म बांधता डरज्यो मन में नहीं तर ग्रति दुख पावो रे,
घणा काल तक इण जग मांही भटका खावो रे ।। भाया ।। १ ।।

कथा पुराणा माँही ग्राई वाही ग्राज सुणावां रे,
सुणकर हिरदय मांही जमाज्यो ग्रतः बतावां रे ।। भाया ।। २ ।।

एक वक्त नारद अंगीरा ऋषि साथ में जावे रे,
देख तमासो एक, ऋषि नारद रुक जावे रे ।। भाया ।। ३ ।।

ऋषि अंगीरा पूछे क्या है क्यों यहां पर ठहराया रे,
तब नारद ने ऋषि अंगीरा से दरसाया रे ।। भाया ।। ४ ।।

देखो ग्रज यह नाज खाय पर लाठी इसे दिखावे रे,
एक दाणा मुख मांही ले ले लकड़ी खावे रे ।। भाया ।। ५ ।।

कहे अंगीरा क्यों खाने दे इसका यह ग्रधिकारी रे,
ऐसे सब खा जायं नष्ट हो पूँजी सारी रे ।। भाया ।। ६ ।।

नारद बोले यह दुकान है पूर्व भव में इसकी रे,
कूड कपट कर बो दी वेलड़ी वहाँ पर विष की रे ।। भाया ।। ७ ।।

इस बकरे का जीव वणिक था पूर्व भव के मांही रे,
करता था व्यापार नाज का हरदम यांही रे ।। भाया ।। ८ ।।

लोगों पर विश्वास जमाकर धोखा उनसे करता रे,
किसी तरह कमती दे करके ज्यादा लेता रे ।। भाया ।। ९ ।।

लोग दिखावा करने खातिर नाम प्रभु का लेता रे,
किन्तु हमेशा बक बिल्ली बत छल में रमता रे ।। भाया ।। १० ।।

अन्याय अनीति करके अर्थ का संग्रह इसने कीना रे,
क्या फल होगा परभव मांही ध्यान न दीना रे ।। भाया ।। ११ ।।

वही सेठ तज मानव भव को अज भव माँही आया रे,
जाण आपणी हाट आज कुछ खाना खाया रे ।। भाया ।। १२ ।।

एक नाज का दाणा भर भी इसका हक है नाँही रे,
देख व्यवस्था यहाँ पर इसकी यह मन आई रे ।। भाया ।। १३ ।।

क्या है दशा जगत की देखो मोह में फंस नर नारी रे,
कर कर खोटे काम व्यर्थ दुख पावे भारी रे ।। भाया ।। १४ ।।

कर्म बांधणो सरल जगत में भोगे तब दुख पावे रे,
अतः सज्जनों समझो हिय में जो सुख चावे रे ।। भाया ।। १५ ।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि यों बार बार चेतावे रे,
बचो कर्म बंधन से हरदम दुख टर जावे रे ।। भाया ।। १६ ।।

दो हजार छत्तीस फागण बुद तेरह दिन गुरुवारो रे,
बिजयनगर में ठाणा पांच के मंगला चारो रे ।। भाया ।। १७ ।।



३ | जैसा लावे वैसा पावे

[तर्ज : उमर छोटी सी]

संग में लाया रे,
वह मिले यहां पर सुख दुख भाया रे ॥ टेर ॥

घर के मांही वैभव लखकर मन में मत गर्वाजे रे।
पुण्य साथ में है थांरे तो लावो लीजे रे ॥ संग ॥ १ ॥

दीन दुःखी की बात सुणीजे वाँ रो दुःख मिटाजे रे।
बणे जहाँ तक साथी होकर सहारो दीजे रे ॥ संग ॥ २ ॥

फिजुल खर्च कर नशा पता में धन ने मती लुटाजे रे।
सावधान होकर के द्रव्य से लाभ कमाजे रे ॥ सग ॥ ३ ॥

पूर्व भव में पाप कमाया वे यहां पर दुःख पावे रे।
पुण्य नहीं लाया रोटी बिन नित तड़पावे रे ॥ संग ॥ ४ ॥

एक गांव के ठाकुर घर में थी पूरी नादारी।
फाटा कपड़ा तन पर, भूखा पेट मझारी रे ॥ संग ॥ ५ ॥

सोचे एक दिन जाऊं कहीं तो रोटी पेट भर खाऊँ रे।
आधे पेट से रहूं हमेशा भूख मिटाऊं रे ॥ संग ॥ ६ ॥

चला सुबह ही अपने घर से एक गांव में आया रे।
चलते चलते थक गया ठहरा तरुवर छाया रे ॥ संग ॥ ७ ॥

पूछ रहा है कहां रावला लोग उन्हें बतलावे रे।
जाकर पोल में बैठ गया नहीं पूछण आवे रे ॥ संग ॥ ८ ॥

इतने में एक दासी आई देख हियो हुलसायो रे।
अब तो मारो काम सिद्ध हुवो मन को चायो रे ॥ संग ॥ ९ ॥

ठाकुर पास बुलाकर बोला जल्दी जाकर कहिजे रे।
भूख सिंह जी बैठा पोल में मुजरो लीजे रे ॥ संग ॥ १० ॥

आई दासी बात सुणाई सुण ठुकराणी जाणी रे ।
ठीक समय पर आया द्वार नहीं रोटी पाणी रे ।। संग ।। ११ ।।

खोटी होसी काम न बणसी झट के ही कहला दूं रे ।
ऐसे ढंग से करूं इशारो झट समझा दूं रे ।। संग ।। १२ ।।

दासी को समझाकर कहती ऐसे जाकर कहिजे रे ।
निरालबाई निछरावल लेवे यों कह दीजे रे ।। संग ।। १३ ।।

भूख सिंह जी से कह दीजे निराल बाई कहलावे रे ।
सुण दासी की बात ठाकुर मन को समझावे रे ।। संग ।। १४ ।।

यहां तो आगे ही भूखा है क्या मुझ भूख मिटावे रे ।
हुआ रवाना सोचो लाया वैसा पावे रे ।। संग ।। १५ ।।

सुनकर कथा हिया में धरज्यो सोहन मुनि चेतावे रे ।
पुण्य पाप को देख तमासो पुण्य कमावे रे ।। संग ।। १६ ।।

४ स्वार्थ का सम्बन्ध

[तर्ज : लावणी खड़ी]

क्यों करता विश्वास जगत में सब स्वार्थ का नाता है ।
बिन स्वार्थ तो देख यहां पर कोई पास नहि आता है ।। टेर ।।

बसन्तपुर में जितशत्रु नृप कमल प्रभा पटराणी है,
विद्या सागर मंत्री राज का नीति निपुण गुण खानी है ।
धनवान नगर में ज्ञानचन्द के विमल प्रभा सेठाणी है,
विनयवान विद्वान मनोहर पुत्र जिन्हों के दानी है ।।

शेर—संत सेवा में रहै नित ज्ञान ध्यान चित्त लाय जी,
किसी तरह भी काम मांही मन नहीं लगवाय जी ।
देखकर उसको पिता यों बार बार समझाय जी,
कर काम तू नित हाट का, अब कहीं मत जाय जी ।।
बात एक भी जमे न उसके सेवा में नित जाता है ।। १ ।।

पिता विचारे कहूं इसे पर नहीं ध्यान में लाता है,
परणा बूं अच्छी कन्या को यही भावना लाता है ।
देख विदुषी कन्या इसका सत्वर ब्याह रचाता है,
वर ले अपनी वधू को वापिस अपने घर आ जाता है ।।

शेर—फिर भी हमेशा संत सेवा में वह तो जाय जी,
देखकर के यह व्यवस्था बहू को ससुर समझाय जी ।
संत सेवा छोडता नहीं दिया खूब दरसाय जी,
अब तो रखना हाथ तेरे तू इसे समझाय जी ।।
सुन करके सब बात ससुर की जी दुख से भर जाता है ।। २ ।।

अब मुझको ऐसा करना है जिससे काम में फंस जावे,
सहज छोड़कर संत सेवा को घर कार्यों में लग जावे ।
कहती पति को आप विना तो क्षण क्षण भारी दिखलावे,
अतः आप तज मुझको यहां से बाहर कहीं भी नहीं जावे ।।

शेर—अगर चाहो जिन्दगी मुझ तो तजी मत जाय जी,
संसार सूना आप बिन ऐसा मुझे दिखलाय जी।
पती कहता संत सेवा मेरे मन में भाय जी,
संसार की सब बात मेरे आती नहीं है दाय जी ॥
सुन नारी बेहोश हो गई त्वरित होश में लाता है ॥ ३ ॥

रोती रोती नारी बोली ऐसे क्या फरमाते हैं,
ऐसा क्या पाषाण हृदय है दया न दिल में लाते हैं।
अंट संट केई बातें कह पूछे वहाँ क्यों जाते हैं,
मेरे से नहीं सच्चा प्रेम सब ऊपर से दिखलाते हैं ॥

शेर—सुनकर मनोहर सोचता यह बात सच दरसाय जी,
स्नेह कितना मेरे प्रति है इसके मानस मांय जी।
ज्यादा कहीं पर रुक गया तो देगी प्राण गंमाय जी,
ध्यान रक्खू मैं सदा नहीं नार ऐसी पाय जी।
उस दिन से सब काम छोड़कर जल्दी घर आ जाता है ॥ ४ ॥

अब तो इतना उलझ गया नहीं सत्संगत में जाता है,
यार दोस्त भी कहें कभी तो उनको यों दरसाता है।
क्या धरा है वहाँ जाने में मुझको अब नहीं भाता है,
नारी प्रेम ही उत्तम जग में वह ही मुझे सुहाता है ॥

शेर—छोड़कर जाऊँ कहीं तो नार मम मर जाय जी।
देखे बिना मुझको कभी भी शांति नहीं वह पाय जी।
क्षण एक का भी हो विरह तो उसका मन दुःख पाय जी,
इतना भरा है स्नेह उसमें कैसे छोड़ा जाय जी ॥
संत समागम अब तो बंधव मेरे को नहीं भाता है ॥ ५ ॥

इक दिन संत सभा में पूछे क्यों न मनोहर आता है,
तभी मित्र हो खड़ा गुरु से सारा हाल सुनाता है।
नारी प्रेम है सच्चा, झूठा सभी धर्म का नाता है,
संत कहे लेकर के आना कहीं तुझे मिल जाता है ॥

शेर—मार्ग में मिल गया मनोहर मित्र यों दरसाय जी,
चलो मेरे संग में क्यों व्यर्थ बात बनाय जी।
इक बार करके संत दर्शन चल के वापिस आय जी,
हठ से मनाकर मित्र को वह संग में ले आय जी ॥
वंदन करके बैठ गया पर ऐसी मन में लाता है ॥ ६ ॥

कब जाऊं मैं यहां से उठकर तभी संत फरमाते हैं,
क्या कारण है कह दो भैया अमूल्य वक्त क्यों खोते हैं।
गया समय नहीं पुनः कहीं भी कोई मानव पाते हैं,
चला गया सो चला गया फिर अंत समय पछताते हैं ॥

शेर—कँवर कहे हे पूज्य गुरुवर बात दू बतलाय जी,
नारी स्नेह इतना है मुझसे बिन देखे मर जाय जी।
संत बोले कर परीक्षा पता तुझे लग जाय जी,
प्रेम मांही फंस कहीं धोखा नहीं खा जाय जी ॥
संतों की बाणी सुन सच्ची कंवर हिये में जमाता है ॥ ७ ॥

वंदन करके आया घर पर नारी से दरसाता है,
खीर पुड़ी तैयार कीजिए खाने को जी चाहता है ॥
अभी बनाती कहा नार ने तभी कंवर फरमाता है,
शूल भयंकर चली पेट में ऐसे कह सो जाता है ॥

शेर—लम्बा करके पैर अपना स्तम्भ बीच फंसाय जी,
जानता था वह कला लीनी समाधि लगाय जी।
माल कर तैयार नारी चल वहां पर आय जी,
सोते हुए यों देखकर आवाज तेज लगाय जी ॥
नहीं बोले तब देखे पास जा मूर्छागत दिखलाता है ॥ ८ ॥

नारी सोचे मालूम होता नहीं रहा है तन में श्वांस,
सभी माल कब्जे में करके खोली कुचियें आकर पास।
खीर पुड़ी खा करके रखली बची हुई थी अपने पास,
फिर रोने को बैठी जोर से आवाज लगाई ले निश्वास।

शेर—लोग आये दौड़कर देखा कंवर बेहाल जी,
यम लोक वासी हो गया है शीघ्र दो निकाल जी।
मिल सभी पग को निकाले फंस गया वेथाल जी,
क्या करें तब एक बोला देवो खम्भ उखाल जी ॥
इसके सिवा नहीं और कोई उपाय ध्यान में आता है ॥ ९ ॥

बोली नारी सबके सन्मुख बात मेरी अब सुन लेना,
इनके पग को काट दीजिए स्थंभ को रहने देना ॥
लोग सोचते नारी कहती उसे ध्यान मांहि लेना,
मांग करोती लावो जल्दी देर जरा भी मत करना ॥

शेर—लाकर करौती हाथ दी, जल्दी करो इस वार जी,
कंवर सुनकर सोचता झूंठा सभी संसार जी।
पैर कटवा रही मेरा दिखा स्नेह अपार जी,
धिक् विषय ले श्वास सत्वर हो गया तैयार जी॥
कहे सभी से मूर्छागत तन कभी कभी हो जाता है॥ १० ॥

सभी गये अपने अपने घर करते मुख से यों उच्चार,
आयु बल लम्बा था इनका जिससे हो गये ये तैयार।
उठ बैठे लख पति चरण में पड़ी सद्य आकर के नार,
सौभाग्यवती हूं पुण्यवती हूं जिन्दे हो गये मुझ भरतार॥

शेर—देखकर नारी चरित्र को मन में करे विचार जी,
विषयवश हो जाल में, मैं फंस गया इस वार जी।
व्यर्थ ही सत्संग छोड़ा मिलती सुधा अनपार जी,
त्यागकर संसार को अब ले लूं संयम धार जी॥
नारी को आ बोला ऐसे अपनी बात सुनाता हूं॥ ११ ॥

झूंठे जग को तज कर अब मैं जाऊंगा मुनिवर के पास,
आज्ञा लेकर दीक्षा ले ली मोड़ लिया अपना मन खास।
विनय भाव से ज्ञानाभ्यास कर वन गया है गुरुवर का दास,
आत्म साधना करके पूरण पा लीना उत्तम गति वास॥

शेर—पंचम आरे मांहि समझो वीर वाणी आधार जी,
तिरना चाहो जगत से लो श्रद्धापूर्वक धार जी।
सम्यक्त्व आये बिन नहीं होगा कभी उद्धार जी,
कह गये गुरु 'प्राज्ञ' हमको सुन लो सभी नर नार जी॥
ऐसी उत्तम सीख प्राप्त कर भव जल से तिर जाता है॥ १२ ॥

समझ समझ यह मानव तन पा व्यर्थ न इसे गमा जाना,
मोह माया में उलझ गया तो होगा अंत में पछताना।
अन्याय अनीति करके जोड़ा आखिर में तजकर जाना,
देख जगत के झूठे रिश्ते कुछ तो मन को समझाना॥

शेर—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि यों वार वार चेताय जी,
संसार मोह को त्याग कर नित संवर मांहि आय जी।
स्वार्थ से सेवा करे सब, स्वार्थ जब मिट जाय जी,
अच्छी तरह से देखना फिर पास कोई नहीं आय जी॥
पार्श्व जयंती विजयनगर में छत्तीस साल मनभाता है॥ १३ ॥



५ | भाषा पर : लाल अरु बाल भाई

[तर्ज : नेम जी]

सुधा सम बोलो सब बानी, मिली यह उत्तम जिन्दगानी ।। टेर ।।

बिगड़ता काम सुधर जावे, लोक सब बस में हो जावे ।
कीर्ति जन जन में छा जावे, वाणी से जग में यश पावे ।

दोहा—वाणी बोल अमोल है, बोल सके तो बोल ।
हिये तराजू तोल के, पछे बाहर खोल ।।
सुनाते सदा यही ज्ञानी ।। सुधा० ।। १ ।।

समझ बिन दे भाषा उच्चार, इसी से होता बहुत बिगार ।
हुआ महाभारत करो विचार, ध्यान में लो सबही नर नार ।

दोहा—दुर्योधन के सामने, द्रौपदी यों दरसाय ।
अंधों के अंधे ही होते, कड़वे वचन सुनाय ।।
किया संग्राम हुई हानि ।। सुधा० ।। २ ।।

शहर एक धनपुर था नामी, अजित सिंह वहां का था स्वामी ।
विजय था मंत्री गुणधामी, वसंत सेना थी पटराणी ।

दोहा—इसी नगर में सेठजी, रहते हैं धनपाल ।
सेठाणी गुण सुन्दर घर में, पुत्र लाल अरु बाल ।।
कठिन से मिले अन्न पानी ।। सुधा० ।। ३ ।।

पितामह इनके धनधारी, नगर में ख्याति थी भारी ।
संतरी रहते हर बारी, आय भी घर में थी भारी ।।

दोहा—भाग्य दशा से हो गया इनका ऐसा हाल ।
धीरे धीरे खुट गया उसके, सारे घर का माल ।।
पलट गई क्षण में पुण्य वानी ।। सुधा० ।। ४ ।।

आय भी अब कमती आवे, शाला में लाल बाल जावे।
लाल शिक्षा में बढ़ जावे, बाल को ज्ञान नहीं आवे।

दोहा—चंद समय में लाल ने, करली बी. ए. पास।
बाल बाल ही रह गया, पढ़ा न कुछ भी खास।।
मिलेगा जो लावे प्राणी।। सुधा०।। ५।।

लाल को नौकरी लग जावे, शहर के दफ्तर में जावे।
बाल को घर धंधा भावे, मस्त तन उसका दिखलावे।

दोहा—आवे नौकरी लाल की, जिससे चलता काम।
शनिवार को आता घर पे, मिलते लोग तमाम।।
सुने सब बैठ चऊँ कानी।। सुधा०।। ६।।

सालम पुर गांव के मांही, व्यापारी सालम सुखदाई।
सावित्री नारी घर माँही विदुषी बिमला है बाई।

दोहा—ब्याऊँ घर वर देख के, पिता करे विचार।
एक दिन देखा लाल को, पाया हर्ष अपार।।
इन्हीं संग ब्याऊँ मन आनी।। सुधा०।। ७।।

लाल भी यह मन में लावे, ऐसी हो नारी मन भावे।
सामिल रह जीवन बीतावे, सेवा कर सबकी सुख पावे।

दोहा—ऐसे अवसर में वहां, आ गया सालम सेठ।
करी सगाई विमला की तय, समझ काम सब रेट।
बात सब मिल गई मनमानी।। सुधा०।। ८।।

ठाठ से लाल विवाह कीना, सेठ ने माल बहुत दीना।
परणकर पुन: गांव लीना, मनोहर सेठ जिमा दीना।

दोहा—विमला आई सासरे, देखा वहां का हाल।
घर की हालत बिगड़ी देखी, नहीं है कुछ भी माल।।
शांति रख सब वहां की जानी।। सुधा०।। ९।।

कोटिपति घर से मैं आई, यहां तो नहीं है इक पाई।
लिया निज मन को समझाई, मुझे अब रहना है यहां ही।

दोहा—घर मुआफिक हो गई, चंद समय के माँय।
पूरे घर का धन्धा करती, आलस दूर हटाय।।
बहू क्या आई रमा रानी।। सुधा०।। १०।।

बाल का विवाह हुआ वहां ही, साधारण घर की बहू आई।
काम भी कर जाने नाँही, सिखावे ज्येष्ठा प्यार लाई।

दोहा—एक दूसरे के प्रति, घर में पूरण प्यार।
कभी नहीं होती है यहां पर आपस में तकरार ।।
खुशी में बीते जिन्दगानी ।। सुधा० ।। ११ ।।

त्याग का मारग बतलाती, मंत्र नवकार भी सिखलाती।
जमींकंद छोड़ो समझाती, निशी का भोजन तजवाती।

दोहा—देवराणी को पास में, बैठाकर हर बार।
सुखी बनाना चाहो जीवन, गन्दे तजो विचार ।।
ध्यान में लेवो हित आनी ।। सुधा० ।। १२ ।।

अतिथि एक दिन घर आये, भोजन की स्वीकृति भरवाये।
देवर भाभी से दरसाये, दाल का हलवा बनवाये।

दोहा—भाभी ने वहां त्वरित ही, कीना भोज तैयार।
मेहमानों को जिमा दिया है, करके अति मनुहार ।।
कहे वे भोजन लासानी ।। सुधा० ।। १३ ।।

जिमाकर सादर पहुंचाया, देवर जब भोजन हित आया।
थाल में लूखा अन्न पाया, देख भाभी को दरसाया।

दोहा—भोजाई कहे लग गया, हलवा करने मांय।
इतना घी कैसे कर लागा, देवर जी दरसाय ।।
जोश में बोला आंख तानी ।। सुधा० ।। १४ ।।

खर्च करे पीहर में ऐसे, लगाती मुफ्त आय वैसे।
समझ नहीं आय होय कैसे? बोल गया मन आवे वैसे।

दोहा—सुन पीहर के नाम को, भाभी खाया जोश।
नारी सब सुन लेती किन्तु पीहर निन्दा पर रोष ।।
भाभी कहे सोच कहो बानी ।। सुधा० ।। १५ ।।

इत्ता घी सुनो पीहर मांही, नौकर जन लेते हैं खाई।
पीहर की कैसे दरसाई, वहां की तुलना कहां यहां ही।

दोहा—देवर को इस बात से, आ गया रोष अपार।
भोजन की थाली उठा, फेंकी है तत्कार ।।
जोश में छा गई हैवानी ।। सुधा० ।। १६ ।।

खड़ाऊँ फेंकी भाभी पर, बचा सिर, लगी है अंगुली पर।
चली गई भवन माँहि सत्वर, बोल गई ऐसे जोश भरकर।

दोहा—यदि होते वे यहाँ पर मजा चखाते आज।
जितना मन चाहे तुम यहां पर करलो घर में राज।
कहाँ है इनमें इनसानी ।। सुधा० ।। १७ ।।

साधारण है इनकी नारी, अपढ़ यह देता इन्हें मारी।
आदत है इनकी हरबारी, खड़ाऊँ उठा मुझे मारी।

दोहा—विमला मन में सोचती, कब आवे शनिवार।
पति देव आयेंगे उस दिन, आज वार गुरुवार ।।
नार की गति, पति मानी ।। सुधा० ।। १८ ।।

शनि को पतिदेव आये, लोग मिल उनको बैठावे।
बात में गहरा रस लावे, बजे दस कोई न उठ जावे।

दोहा—विमला बैठी भवन में, करे खूब इंतजार।
रात गई अब पति आयेंगे, कहूं बात का सार ।।
यही ली मन माँही ठानी ।। सुधा० ।। १९ ।।

पंचायत उठी लोग जावे, तभी आ भाई दरसावे।
भाभी को आप समझावे, संभल कर मुख से दरसावे।

दोहा—नहीं तो अनर्थ हो जाएगा, कहता हूं सच वाय।
पिता कहे है अच्छा नाँहीं, बहू बेटी सिर छाय ।।
लगी मुँह सबके बहूरानी ।। सुधा० ।। २० ।।

और कहे ऐसे लघु भाई, बड़े घर से भाभी आई।
कहार तो हम भी है नाँहीं, पीहर की महिमा रही गाई।

दोहा—ज्येष्ठ बन्धु कहे बंधुवर, कहो साफ वृत्तान्त।
बाल कहे वह अपने आपही, नहीं बात में तन्त ।।
लाल सुन खा पीकर पानी ।। सुधा० ।। २१ ।।

सीधा वह भवन माँहि आया, बात कर पति ने फरमाया।
कहो क्यों घर में द्वन्द्व छाया, आज तक मैं नहीं सुन पाया।

दोहा—नारी कहे नहीं पूछते, कलह मूल है कौन।
उनने ही यह खड़ा किया है सत्य कहें क्यों मौन ।।
प्रेम पर फेर दिया पानी ।। सुधा० ।। २२ ।।

पति कहे सच क्या ? दरसावे, नारी सब बीतक बतलावे।
खड़ाऊ उठा शीघ्र लावे, फेंकी सिर मेरा बच जावे।

दोहा—नीचा करके बचा लिया, पड़ी अंगुली पर आय।
नहीं तो सिर फट जाता मेरा, जाती यम घरमांय ॥
करी वे गहरी नादानी ॥ सुधा० ॥ २३ ॥

जुल्म अहो भाई ने कीना, काम यह अच्छा नहीं कीना।
बात कह झूठ फंसा लीना, धोखे में मुझे डाल दीना।

दोहा—जाता मैं तो नौकरी पीछे से यह काम।
दादा भी ले पक्ष उसी का हो गया काम निकाम ॥
जीवन हुआ इसका धूलधानी ॥ सुधा० ॥ २४ ॥

सोचकर क्रोध हिए लाया, अति वह दिल में दुख पाया।
रात वह ज्यों त्यों बिताया, सबेरे पिता पास आया।

दोहा—दादा अब होगा नहीं, मेरा यहाँ निर्वाह।
जिन बातों का था विरोधी, वही पकड़ रहा राह ॥
करूँ क्या छा गई हैरानी ॥ सुधा० ॥ २५ ॥

पिता सुन मन में घबराये, कभी नहीं बात यह मुख लाये।
आज यह कैसे दरसाये, मेरी यह शर्म सदा खाये।

दोहा—पिता कहे क्या बात है क्यों इतना अकुलाय।
पुत्र कहे अन्याय हो गया सहा न मुझसे जाय ॥
बालु यहाँ करे है मनमानी ॥ सुधा० ॥ २६ ॥

खड़ाऊ उसने दे मारी, चोट लगती सिर के भारी।
हाल क्या होता इस वारी, बात यह हो गई दुखकारी ॥

दोहा—इनमें शैतानी बढ़ी मैं तो जाऊँ काम।
औरत से झगड़ा करे होता यों बदनाम ॥
छाई है उसमें मस्तानी ॥ सुधा० ॥ २७ ॥

पिता कहे ऐसी घर नारी, काम सब देती बिगारी।
नारी के पीछे तू भारी, भूल करता है इस वारी।

दोहा—अभी तुझे मैं क्या कहूं तू अच्छा विद्वान।
बात सोचकर मुख से बोलो ना हो घर में हान ॥
कहूं मैं तुझको हित आनी ॥ सुधा० ॥ २८ ॥

गांव में हर घर के माँही, मिटाऊँ झगड़े मैं जाई।
करूं क्या अपने घर माँही, देख रहा झगड़ा मैं यहाँ ही।

दोहा—लाल कहे दादा सुनो, जब तक सजा न पाय।
तब तक उसका बढ़े हौंसला, सहा यह कैसे जाय॥
बढ़ेगी उसमें शैतानी॥ सुधा०॥ २९॥

बाल है तेरा ही भाई, गलती हो देवो समझाई।
लाल कहे समझूं नहीं भाई, भरी है उसमें खोटाई।

नारी के पीछे कहे ऐसी मुख से बात।
क्रूर कर्म उसका है ऐसा कैसे मानूं भ्रात॥
आपस में हुई खेंचातानी॥ सुधा०॥ ३०॥

बात यह सुनी सभी नर नार, सेठ के घर हो रही तकरार।
लाल कहे सम्भालो घर बार, नार के पीछे यह क्यों राड।

दोहा—एक एक कर आ रहे शनैः शनैः नर नार।
पिता देख यों सोचे मन में ऐसी करूं इस वार॥
बात सब रह जावे छानी॥ सुधा०॥ ३१॥

नहीं तो लोग हँसें हर बार, कहेंगे घर का करो सुधार।
पराई मेटो आप तकरार, प्रतिष्ठा होगी मेरी छार।

दोहा—पिता कहे सुन लाल तू, गुनाह किया जो बाल।
बड़ा होय माफी कर देना, सुधर जाय सब हाल॥
लाल ने एक नहीं मानी॥ सुधा०॥ ३२॥

लाल कहे रहूं न इसके साथ, कहूं मैं अपनी सच्ची बात।
क्रूरता इसकी सही न जात, बात की हद हो गई है तात॥

दोहा—पिता कहे सुन लाल तू मूरख पर यों रोष।
बुद्धिमान को शोभे नांहीं तज दो उसके दोष॥
बात लो मेरी यह मानी॥ सुधा०॥ ३३॥

पिताजी सुन लो निर्णय आज, सभी चाहें बिगड़े सुधरें काज।
आये सिर मेरे बुराई ताज, जगत में जावे मेरी लाज।

दोहा—पर अब इसके साथ मैं, रहूं न घर के मांय।
यदि आपको बालू प्यारा, जुदा करो मुझ तांय॥
कहूं मैं चौड़े, नहीं छानी॥ सुधा०॥ ३४॥

बालू सब सुन रहा चोखट पास, नहीं थी उसको इतनी आश।
कलह छू जावेगा आकाश, नहीं था दिल में यह विश्वास।

दोहा—पिताजी से ज्यादा करूँ भ्राता का सम्मान।
कभी न उसके सम्मुख बोलूँ, रक्खूं पूरी आन॥
आज क्या सुन रहा यह बानी॥ सुधा०॥ ३५॥

प्यार था कितना दिल माँही, कभी पढ़ आते घर माँही।
चीज ला देते मुझ ताँई, कमी नहीं आने दी काँई।

दोहा—बढ़िया वस्त्र पहना मुझे, खुश होते दिल माँय।
बिचार करते बालू के, तब नयनों नीर भराय॥
आँखों से टपक गया पानी॥ सुधा०॥ ३६॥

किये पर पश्चाताप लाया, हृदय में दुःख अति पाया।
करे क्या गहरा उलझाया, कर्म सब मैंने निपजाया।

दोहा—कैसे भाई सामने खड़ा रहूं अब जाय।
मुख देखना चाहे नाँहीं ऐसे मन में लाय॥
हुई क्यों मुझसे नादानी॥ सुधा०॥ ३७॥

सोच निज कमरे में आया, वस्त्र अपने ही पलटाया।
निकल झट भाभी दर आया, खड़ा रह ऐसे दरसाया।

दोहा—भ्राता मेरे संग में, रहना अब नहीं चाय।
मुँह देखना मेरा उनको, अच्छा नहीं लखाय॥
तजूं यह घर मन में आनी॥ सुधा०॥ ३८॥

आज तक जो भी भूल कीनी, गलती से तकलीफें दीनी।
सेवाएं उनसे मैं लीनी, आदर में कभी कमी कीनी।

दोहा—इन सब दोषों के लिए, दे माफी बक्षाय।
यह सब कह देना भ्राता से, जाऊँ शीश नमाय॥
बालू के गिरा नयन पानी॥ सुधा०॥ ३९॥

उसी क्षण लाल वहां आया, ध्यान नहीं दीना खड़ा भाया।
उन्हें बिन देखे चल आया, भ्रांति अति मन मांही लाया।

दोहा—विमला मन में सोचती कैसा हो गया काम।
नहीं जानती इतना होगा, कलह दुःख का धाम॥
बनी मैं क्यों यहाँ दुख दानी॥ सुधा०॥ ४०॥

बात क्यों मैंने निकाली, जीभ क्यों मेरी यहाँ चाली ।
कलेजा दीना मैं बाली, हुई क्यों मैं इतनी काली ।

दोहा—पतिदेव भी गर्म हो, इतने क्यों अकुलाय ।
यह अंगारे मैंने डारे, मेरी जीभ जल जाय ।।
देवर को देख दया आनी ।। सुधा० ।। ४१ ।।

उसी क्षण शब्द यों आया, भाभी जी जाऊँ चित्त चाया,
क्षमा की भीख लेने आया, देवर ने ऐसे दरसाया ।

दोहा—श्रवण करके भाभी का, गद्‌गद हो गया मन्न ।
दोनों नेत्र से आंसू निकले, विकल हो गया तन्न ।।
मैल दिल धोया नयन पानी ।। सुधा० ।। ४२ ।।

उठकर पति पास आई, देवर को लेवें बुलवाई ।
रो रहे बाहर खड़े भाई, दया कर देखे उस ताँई ।।

दोहा—लाल कहे देखूँ नहीं, मुख उसका इस बार ।
दुख पाओगे कहती हूं मैं, छोड़ गये घर बार ।।
हो रही उसके मन ग्लानि ।। सुधा० ।। ४: ।।

देवर कहे भाभी सुन लेना, भैया को प्रणाम कह देना ।
नहीं अब यहां मेरा रहना, जाऊंगा जहाँ नहीं अपना ।

दोहा—मुख नहीं देखे माहरो, मैं भी दिखाऊँ नाँय ।
ऐसे कह चलने लगा भाभी दौड़ी आय ।।
पकड़ कहे हाथ क्या ठानी ।। सुधा० ।। ४४ ।।

भाभी के बह रही अश्रु धार, देवर कहे जाने दो इस बार ।
अयोग्य हूं रहूं न तुम्हारी लार, जीवन अब मेरा है बेकार ।

दोहा—बाल कहे रहता नहीं, जाने देऊं नाँय ।
भाभी कहती शपथ दिलाऊँ छोड़ कहीं मत जाय ।।
कहूं मैं हृदय खोल वाणी ।। सुधा० ।। ४५ ।।

जहां तक भैय्या दिल मांही, सफाई मेरे प्रति नांही ।
कहूं मैं साफ साफ याही, रहूंगा हरगिज यहाँ नाँही ।।

दोहा—भाभी कहे थारे प्रति, नहीं है बुरे विचार ।
ईश्वर की सौगंध खा कहती, दिल में है न विकार ।।
सुनी दिल लाल हुआ पानी ।। सुधा० ।। ४६ ।।

त्वरित उठ लाल बाहर आया, बाल को छाती चिपकाया।
गले मिल नयन नीर लाया, मैल हुआ साफ हृदय आया।

दोहा—बाल कहे बांधव सुनो मत कहना यह बात।
मुख नहीं देखूं बाल का, इससे मन दुख पात ।।
और सब दंड लेऊँ मानी ।। सुधा० ।। ४७ ।।

लाल कहे सुन बालू भाई, आने दे ये अवसर नाँही।
भेद नहीं होवे दिल मांही, खुशी खुशी रहो घर मांही।

दोहा—इतने वहां पर आ गये, पिता बाहर से चाल।
गले मिल रहे दोनों भाई करके हृदय विशाल ।।
निकल गई मुख से यों बानी ।। सुधा० ।। ४८ ।।

बढ़ी थी आपस मांही ठेस, मिटा दिया घर का सारा क्लेश।
रहा नहीं मन में कुछ भी द्वेष, सिखा दिया प्रेम मंत्र का रेश।

दोहा—बड़े घरों की बेटियां, करती सद् व्यवहार।
बिगड़े बँधव प्रेम को, दीना सद्य सुधार ।।
प्रशंसा फैली चहूं कानी ।। सुधा० ।। ४९ ।।

धर्म का रहस्य समझावे, सामायिक संवर करवावे।
त्याग पचक्खाण शुद्ध भावे, करो यह सबको दरसावे।

दोहा—धर्म घोष अणगार से, लिया श्रावक व्रत धार।
मन वच तन से शुद्ध पालकर, लीना जन्म सुधार ।।
सफल की अपनी जिन्दगानी ।। सुधा० ।। ५० ।।

कहे मुनि 'सोहन' यों हर वार, सुधा सम बोलो सब नर नार।
देव गुरु धर्म हिया में धार, इसी से होगा भव जल पार।

दोहा—दो हजार छत्तीस का, पोस पूनम बुद्धवार।
शहर केकड़ी आये विचरते, ठाणा पांच सुखकार ।।
खुशी हुई सबको मन मानी ।। सुधा० ।। ५१ ।।



६ | अर्थ से अनर्थ : दो भाई ऊँट पर मोहरें

[तर्ज : छोटी कड़ी]

है अर्थ अनर्थ की खान, सुनो नर नारी।
अन्याय हुए हैं धन के पीछे भारी ।।टेर।।

इक छोटे गांव में रहे साधारण भाई,
घर घर में करते खेती काम सदाई।
निर्धनता में रहे वहां दो भाई।
एक दिन दोनों ही बैठे पास में आई ।।मि०।।
बातचीत में दोनों एम विचारी ।।१।।

इस हालत में कहां तक काम चलावें।
भोजन के बिन हम रात दिवस दुःख पावें,
अतः यहां से बैठ ऊँट पर जावें।
मिले जहां से सम्पत्ति लेकर आवें ।।मि०।।
अब यहां से चलने की करलो तुम तैयारी ।।२।।

चढ़ी ऊँट पर दोनों हुए रवाना।
सीधा मिले या डाका डाल कर लाना।
जैसे कैसे भी धन लेकर के आना।
नहीं तो वापिस लौट यहां नहीं आना ।।मि०।।
निकल गये कई कोस हृदय में धारी ।।३।।

चलते चलते अटवी भयंकर आई।
आगे जाने की भूमि विकट दिखलाई।
अटवी से दौड़ते संत वहां गये आई।
भगने का कारण पूछे दोनों भाई ।।मि०।।
भाग रहे इतने क्यों क्या भय भारी ।।४।।

संत कहे एक राक्षस यहां भयकारी।
इधर जाय उसको देगा वह मारी।
अतः कहूं तुम मारग देवो छारी।
हंसने लगे दोऊं भ्रात बात सुन सारी ।।मि०।।
हम क्षत्री हैं तुम संत कायरता धारी ।।५।।

जायेंगे हम तो इसी राह नहीं भागें।
भय राक्षस का भी हमको कुछ नहीं लागे।
कह कर संत को उसी राह में लागे।
लख कंचन का ढेर भाग्य हम जागे ।।मि०।।
संत बात नहीं मानी की हुशियारी ।।६।।

सोचे संत जो राक्षस यहां बताता।
वही वापिस आ गाड़े भर ले जाता।
दुनिया को धोका देकर संत कहाता।
मिथ्या बोलकर हमको भी भरमाता ।।मि०।।
अब भरो ऊँट पर माल करो तैयारी ।।७।।

ऊँटों पर भरली पड़ी अशरफी सारी।
पुनः लौटने की झट दिल में धारी।
एक कहे राह में लग गई भूख करारी।
कहे दूसरा आ रहा शहर अगारी ।।मि०।।
वहां पर खाना माल यही मन धारी ।।८।।

शहर पास आ दोनों ऊँट ठहराये।
पाँच अशरफी लेकर एक सिधाये।
जाते वक्त उसके दिल में यों आये।
मिला भाग्य से योग सीधा धन पावे ।।मि०।।
किन्तु आधा तो लेगा वह निकारी ।।९।।

कैसे होऊँ दोनों का मैं स्वामी।
मिला देऊँ विष युक्ति उसने पायी।
लेकर मिठाई मिला दिया विष नामी।
खाते ही हो जावे पर भव गामी ।।मि०।।
वना बनाकर लाया हर्ष अपारी ।।१०।।

ऊँटों वाला भी सोचे कुछ मन मांहि।
पहले वाली ही उसे भावना आई।

देखा उसको लीनी बंदूक उठाई।
एक बार में मार गिराया भाई ।।मि०।।
सोचे कामना सिद्ध हो गई मारी ।।११।।

लेकर बैठा खाने वहाँ मिठाई।
खाते उड़ गये प्राण पखेरु वांहि।
खा गया राक्षस संत बात दरसाई।
धन से मर गये देखो दोनों भाई ।।मि०।।
सुनकर धन से ममता देवो उतारी ।।१२।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि चेतावे।
धर्म ध्यान कर ज़ीवन में सुख चावे।
भजो सदा नवकार गुरु फरमावे।
जन्म मरण दुःख काट मोक्ष पद पावे ।।मि०।।
अमूल्य नर भव मिले न बारम्बारी ।।१३।।



७ | लोभ पर :

हाथ लगाते ही सोना हो

[तर्ज : द्रोण]

सब पापों का मूल लोभ बतलाया मा० ।
कष्ट बिन सोचे आवे जी ।
लालच में फंस गया दुःख आखिर में पावे जी ।।टेर।।

एक शहर धवलपुर था इस भूमंडल पर मा० ।
नन्द राजा था नामी जी ।
दास दासी भंडार, नहीं थी कुछ भी खामी जी ।
पतिव्रता पटराणी सुशीला जिनके मा० ।
करे वह बहु दातारी जी ।
आया द्वार पर पावे वस्तुएँ इच्छित सारी जी ।
उसी नगर में लोभी राम एक रहता मा० ।
सदा घर में धन आवे जी ।।१।।

चलता उसका व्यापार शहर में नामी मा० ।
तथापि तृष्णा भारी जी ।
रात दिवस यों सोचे सम्पति आवे सारी जी ।
पत्नी थी और पुत्री एक गुण माला मा० ।
जीव तीनों घर मांहि जी ।
खान पान का खर्चा है ज्यादा कुछ नांहि जी ।
एक वक्त संत वहां चमत्कारी चल आये मा० ।
ख्याति सुन सेठ सिधावे जी ।।२।।

अहो निश सेवा करता तन-मन धन से मा० ।
एक दिन संत सुनावे जी ।
क्या चाहना है दिल में वो मुझको बतलावे जी ।
तब प्रसन्न होकर सेठ सद्य दरसावे मा० ।
कामना ऐसी मेरी जी ।

हो जाय भावना सफल, कृपा हो जावे तेरी जी।
मैं किसी चीज के जाकर हाथ लगाऊँ मा.।
वही सोना हो जावे जी ।।३।।

संत कहे तू पहले सोचले मन में मा०।
शब्द मुख से खुल जावे जी।
फिर कहे मुआफिक काम तेरा सब ही बन जावे जी।
वह बोला सोचली यही कामना मन में मा०।
तथास्तु संत कहावे जी।
उस ही क्षण उस सेठ हाथ में शक्ति आवे जी।
जिसके लगावे हाथ सुवर्ण हो जावे मा०।
सेठ मन आनन्द पावे जी ।।४।।

सबसे पहले कपाट किये सोने के मा०।
सभी बरतन कर दीने जी।
पाट पाटले दबात कलम कंचन के कीने जी।
फिर गया बाग में वृक्ष सुवर्ण के कीने मा०।
देखकर शाह हरसाया जी।
सोचे सेठ है मेरे पास में अनुपम माया जी।
अब तो मन में फूला नहीं समावे मा०।
उमंग घर घर पर आवे जी ।।५।।

लग रही भूख गहरी यों सेठ सुनावे मा०।
सेठाणी भोजन लाई जी।
रखा पाट पर थाल बात ऐसी दरसाई जी।
गरम गरम ये भोजन जल्दी जीमे मा०।
ग्रास जब कर में लीना जी।
उस ही क्षण हुआ कंचन मन में दुःख वह कीना जी।
अब सोना कैसे मुख मांहि वह रक्खे मा०।
सेठ मन में घबरावेजी ।।६।।

उस समय पुत्री गुणमाला पास में आई मा०।
प्यार से लिया उठाई जी।
लगते ही हाथ कंचन मय हो गयी उनकी बाई जी।
निर्जीव होय वह पड़ी भूमि के ऊपर मा०।
सेठ लखकर चकराया जी।
होगा क्या अब हाल मेरा मन में दुख पाया जी।

यह देख व्यवस्था सेठाणी रही दूरी मा० ।
सेठ कर नहीं छू जावे जी ॥७॥

अब तो लोग सब रहे सेठ से दूरे मा० ।
भयंकर दुःख मन मांहि जी ।
हाथ लगे तो मरें शंक यह दिल में आई जी ।
पागल श्वान सम देख सभी डरते हैं मा० ।
सेठ लख मन में लावे जी ।
खान पान परिवार कोई मुझ काम न आवे जी ।
मैं तो समझता होगा धन सुख दाई मा० ।
वही धन प्राण हरावे जी ॥८॥

ऐसा द्रव्य क्या होगा आनंद कारी मा० ।
संत के स्थानक जावे जी ।
लगा पकड़ने चरण संत वहां से हट जावे जी ।
रहना मुझसे दूर पास मत आना मा० ।
मुझे क्या सुवर्ण बनावे जी ।
सुनकर गुरु की बात सेठ झट शीश झुकावे जी ।
कृपा करी अब मेरा कष्ट मिटावो मा० ।
मुझे अब धन नहीं चावे जी ॥९॥

सन्त कहे तुमको पहले समझाया मा० ।
लोभ वश तू नहीं मानी जी ।
सेठ कहे लालच दुखदाई लीना जानी जी ।
अब समझ गया मैं अति सदा दुखदाई मा० ।
द्रव्य तज समता धारूं जी ।
करूं सदा मैं ईश भजन ममता को मारूं जी ।
संत कहे अब तेरी क्या है इच्छा मा० ।
पूर्ववत् मुझे बनावे जी ॥१०॥

कहे तथास्तु संत वैसा हो जावे मा० ।
सेठ दिल शांति आई जी ।
त्याग जगज्जंजाल भावना शुद्ध बनाई जी ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि यों कहता मा० ।
लालच तज जो सुख चावे जी ।
सुनकर सेठ वृत्तान्त हृदय के मांहि जमावे जी ।
दो हजार छत्तीस फागुण सुद सातम मा० ।
जोड़कर द्रोण में गावे जी ॥११॥



८ | मेघ मुनि

[तर्ज : उमर छोटी सी]

मुक्ति पावे रे! या सोई आत्मा जब जग जावे रे ।। टेर ।।

एक वक्त श्री वीर पधारे, राजगृह के मांहि रे ।
वाणी सुनकर जनता प्रभु की, अति हरसाई रे ।।१।।

राजा प्रजा अरु मेघ कंवर भी, प्रभु दर्शन को जावे रे ।
विधिवत बंदन करके बैठे, प्रभु फरमावे रे ।।२।।

चेतो चेतो ऐसा अवसर, नहीं हाथ में आवे रे ।
गमा दिया वह अन्त समय में, अति पछतावे रे ।।३।।

धर्म करण हित उत्तम नर भव, कठिन कठिन तम पायो रे ।
अतः त्याग परमाद लाभ ल्यो, यूं फरमायो रे ।।४।।

सुनकर वाणी मेघकंवर को मनड़ो अति हरसायो रे ।
अंधकार मय जीवन में सूरज प्रगटायो रे ।।५।।

बीत गयो सो गयो वक्त वह, पुनः लौट नहीं आवे रे ।
सफल बणे अवशेष समय यों मन में लायो रे ।।६।।

प्रभु पास में आय कंवर, चरणा में शीश नमावे रे ।
'दीक्षा लूंगा' प्रभु चरण में, अरज सुणावे रे ।।७।।

अहा सुहं देवानुप्रिये ! यों प्रभु वचन फरमावे रे ।
बंदन करके पुनः लौट, निज महलां आवे रे ।।८।।

श्रेणिक तात अरु माता को निज भाव सब दरसावे रे ।
सुनकर मात, पिता, परणीता सब समझावे रे ।।९।।

प्रभु वाणी का जिस मानस पर सही रंग चढ़ जावे रे ।
लगा मजीठी रंग कभी नहीं, छूटने पावे रे ।।१०।।

आज्ञा लेकर बड़े ठाठ से प्रभु पास में आवे रे।
चारित्र कर स्वीकार शांति से दिवस बितावे रे ॥११॥

लघु संत होने से शैय्या आखिर मांहि जावे रे।
गमनागमन होने से पग की, ठोकर खावे रे ॥१२॥

पूरी रात ही मेघ मुनि को, तनिक नींद नहीं आवे रे।
चिंतन करते लघु मुनि जी अति घबरावे रे ॥१३॥

अहो ! अहो ! ! मुनिराज पूर्व में कितना प्रेम दिखाते रे।
सारी रात ही बीती देखो, ठोकर खाते रे ॥१४॥

राज महल के ठाठ बाट सब चिंतन मांहि आवे रे।
ऐसे दुख नहीं सहन हुए, यों मन में लावे रे ॥१५॥

सूर्योदय होते प्रभु आज्ञा ले वापिस निज घर जाऊं रे।
अपने दुख की बात प्रभु को जाय सुनाऊं रे ॥१६॥

हुआ सवेरा प्रभु पास आ सविनय शीश नमावे रे।
तभी मेघ को वीर जिनेश्वर, यों फरमावे रे ॥१७॥

अहो मेघ ! घर जाने की क्या तुमको मन में आई रे ?
हन्तानाथ ! यह बात आपने, सच दरसाई रे ॥१८॥

पूर्व जन्म वृत्तान्त मेघ को, वीर प्रभु फरमावे रे।
गज भव में अनुकम्पा करके, शशक बचावे रे ॥१९॥

ढाई रात दिन तीन पैर से खड़ा रहा वन मांहि रे।
ऐसा करके असह्य वेदना तूने पाई रे ॥२०॥

पूर्व जन्म कर श्रवण मेघ मुनि जाति स्मरण पावे रे।
ज्ञान नेत्र से देख सभी मन, स्थिर हो जावे रे ॥२१॥

प्रभु चरण में अर्ज करे यों, गिरते लिया बचाई रे।
अनन्त दुःख पाया मैंने मुनि वर दरसाई रे ॥२२॥

दो आंखों के सिवा समर्पण, तन सेवा के मांहि रे।
गुरुजन की सेवा मांहि दूं, इसे लगाई रे ॥२३॥

जगी आत्मा मेघ मुनि की, कारज सिद्ध कर लीना रे।
अध्याय प्रथम ज्ञाता सूत्र में, वर्णन कीना रे ॥२४॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, आत्मा जब जग जावे रे।
जन्म मरण जंजीर काट, मुक्ति पद पावे रे ॥२५॥

९ | क्रोध से हानि : मुनि दम सार

[तर्ज : छोटी कड़ी]

है क्रोध दुःख का मूल, तजो हे भाई २।
होवे क्रोध से हानि, ज्ञानी फरमाई ॥टेर॥

एक वक्त विचरते वीर कृतंगला आये।
वहां सिंहरथ है भूपाल प्रजा मन भाये।
दमसार पुत्र विद्वान गुणी गुण गाये।
पुत्र पिता दोऊ चाल सभा में आये ॥मि.॥
उस वक्त सभा में बनमाली दरसाई ॥१॥

श्रमणेश प्रभु महावीर यहाँ पर आये।
सुनकर के यह खबर भूप हरसाये।
नृप आये सब परिवार साथ में लाये।
सविनय सविधि प्रभु को शीश झुकाये ॥मि.॥
परिषद् में वाणी वीर जिनंद फरमाई ॥२॥

नरभव है अनमोल हाथ में आया।
मत खोवो व्यर्थ यों सटर पटर में भाया।
धर्म ध्यान कर इनसे लाभ कमाया।
वही जगत में अपना काम बनाया ॥मि.॥
दमसार खड़ा हो प्रभु से अर्ज सुनाई ॥३॥

सत्य वचन है प्रभु आपके सारे
सुनकर मैंने आज हृदय में धारे।
करूं आत्म कल्याण शरण आ थारे।
दीक्षा लेने की चाह जगी है मारे ॥मि.॥
तब वीर प्रभु ने अहा सुहं सुनाई ॥४॥

मात पिता से आज्ञा झट ले लीनी।
बड़े ठाठ से भूप तैयारी कीनी।

प्रिय पुत्र की भेंट प्रभु को दीनी।
चढ़ते भाव से कंवर दीक्षा ले लीनी ।।मि.।।
सेवा कर लिया ज्ञान अंगों का पाई ।।५।।

फिर तप करने में गहरा जोर लगाया।
बेला तेला अरु कर रहे खूब अठायां।
मास खमण कर कृष कर दीनी काया।
नहीं करे प्रदर्शन तप जप का मुनिराया ।।मि.।।
आडम्बर कर तप को देते लुटाई ।।६।।

एक दिवस मुनिजी प्रभु पास में आये।
अपने मन के सभी भाव दरसाये।
केवल पद को कहो नाथ कब पाये।
मुनि को तत्क्षण प्रभुवर यों बतलाये ।।मि.।।
वह समय तुम्हारा पास गया है आई ।।७।।

यही भाव रहे एक पहर के माँहि।
बनो केवली संशय इसमें नाँहि।
किन्तु गोचरी जाते क्रोध गया आई।
फिर देरी होगी सुन लो मुक्ति राही ।।मि.।।
नहीं आने दूंगा क्रोध कहे मुनिराई ।।८।।

जब गये गोचरी नर एक सन्मुख आया।
देख उसे मारग पूछे मुनिराया।
सुनकर मुनि की बात क्रोध दिल छाया।
अरे ! अरे !! यह मोड़ा सम्मुख आया ।।मि.।।
कई दिनों से रहा काम पर जाई ।।९।।

इतने दिन बीमारी से दुःख पाया।
किया आज विचार सामने आया।
बुरे भाव से गलत मार्ग बतलाया।
उसी राह पर मुनि ने कदम बढ़ाया ।।मि.।।
गरमी में चलते मुनि गये घबराई ।।१०।।

इस कारण मुनि के क्रोध हृदय में आया।
लब्धि फोड़कर जन जन को कल्पाया।
थोड़े समय में फिर मन को समझाया।
लीनी सब समेट लब्धि मुनिराया ।।मि.।।
आकर प्रभु के पास बात दरसाई ।।११।।

करके आलोचन जीवन शुद्ध बनाया।
प्राणी मात्र को मन कर शुद्ध खमाया।
प्रभु पास में भाव सभी दरसाया।
कब बनूं केवली तब भगवन फरमाया ।।मि.।।
दिवस सातवें केवल पद लें पाई ।।१२।।

घाति कर्म किया नष्ट भाव शुद्ध लाई।
दमसार मुनि लिया केवल पद को पाई।
वही सातवां दिवस गया जब आई।
जिस तरह वीर भगवान दिया फरमाई ।।मि.।।
केवली पद पा दिया भवि समझाई ।।१३।।

अंत अघाति कर्म खपा मुनि राई।
नर देही को त्याग मोक्ष लिया पाई।
जन्म मरण का दीना दुःख मिटाई।
अनन्त सुख लिया सिद्ध स्थान में जाई ।।मि.।।
वे बने निरंजन ज्योति में ज्योति समाई ।।१४।।

करके क्रोध दिया केवल आगे बढ़ाई।
अतः क्रोध दुख मूल तजो सब भाई।
नहीं रहा क्रोध का लेश मात्र जब भाई।
दमसार मुनि ने केवल ज्योति पाई ।।मि.।।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि दरसाई ।।१५।।



१० | क्षमा गुण : बहू ने सास को समझाया

[तर्ज : छोटी····]

मानव वह इस जग में जन्म सुधारे।
तजकर दिल से क्रोध क्षमा गुण धारे ।।टेर।।

संतोषपुर एक शहर पृथ्वी पर नामी २।
संतोष सिंह रणवीर प्रजा का स्वामी।
प्रजाजनों का नृप है नित हित कामी।
दान पुण्य से महिमा उसने पामी ।।मि.।।
फैली कीर्ति जगति तल पर सारे ।।१।। तज० ।।

रहे वहां जिनदास सेठ गुणधारी।
पाले अणुव्रत जिन आज्ञा अनुसारी।
सेठाणी विमला जिनके है घर नारीं।
पुत्र सुमति ली पढ़ करके हुशियारी ।।मि.।।
अब पुत्र हाट का काम सभी संभारे ।।२।।

देख विदुषी कन्या पुत्र परणाया।
आ गई बहू घर आनन्द मंगल छाया।
सभी कार्य में दक्ष देख सुख पाया।
पुण्योदय से धर्म कार्य मन भाया ।।मि.।।
सेठ दम्पति मन मांहि हर्षा रे ।।३।।

एक दिन सेठाणी तेला करने जावे।
पास बुलाकर बहू को बात सुनावे।
मैं जाऊं स्थानक घर का काम निभावे।
निपट काम से संध्या को वहां आवे ।।मि.।।
अष्ट पहरिया तेला मन से धारे ।।४।।

बहु भी लीना तेला मन में धारी।
सोचे घर की लीनी जिम्मेवारी।
अतः काम में नहीं हो हमारी पोल।
सभी काम में रखती है हुशियारी ।।मि।।
संध्या तक सारा काम दिया निपटा रे ।।५।।

स्थानक जाने की बहू ने की तैयारी।
आकर यों बोला सेठ उसे उस वारी।
आड़तिये आये भोजन करो तैयारी।
लगी बनाने खाना बहू उस वारी ।।मि.।।
जीमाने में सारा वक्त निकारे ।।६।।

दूजा दिन भी इसी तरह से जावे।
स्थानक जाने का समय नहीं मिल पावे।
अन्य औरतें सासू को दरसावे।
सेवा खातिर बहू क्यों नहीं आवे ।।मि.।।
ऐसी भी क्या जो सास को नहीं संभारे ।।७।।

कठिनाई से तीजे दिन बहू आई।
लखकर सासुजी मन में जोश भराई।
सरल भाव बहू पैर दावने चाई।
तभी सास ने बहू को यों दरसाई ।।मि.।।
तीन दिवस नहीं लीनी खबर यहां आ रे ।।८।।

कर नरमाई बहू ने बात सुनाई।
सुनकर सेठाणी बहू को यों दरसाई।
खैर! कहूं कल आलस दूर हटाई।
करनी चीजें तैयार पारणे ताई ।।मि.।।
बहू बोली, हो तेले मांहि विचारें ।।९।।

यह काम तो मेरा जो कुछ चावे।
उसके लिये तो आप नहीं फरमावे।
यदि गलती हुई हो तो माफी बक्षावे।
घर आकर वह चिन्तन में लग जावे ।।मि.।।
प्रातः चीजें रख दी सभी बना रे ।।१०।।

मुझको भी पारणा करना सास जी आवे।
तेले का सोगन पाल दातून मन भावे।

मुख को धो रही तभी सास जी श्रावे ।
देख बहू को सासू रोष भरावे ।।मि.।।
मारी बहू के सिर में लठ्ठ उठारे ।।११।।

भरी रोष में सेठाणी दरसावे ।
धो रही मुख को जरा शरम नहीं श्रावे ।
तेले का पारणा मेरे ध्यान नहीं लावे ।
अंट शंट केई बहू को बात सुनावे ।।मि.।।
तू कब रखेगी पारणा मेरे बना रे ।।१२।।

खून बह रहा तदपि कर नरमाई ।
सासू के चरण पकड़कर बात सुनाई ।
सारी चीजें रखी हैं बनी बनाई ।
श्रब करें पारणा श्रापने देर लगाई ।।मि.।।
सुनी बहू की बात गई शरमा रे ।।१३।।

श्रन्दर जाकर देखी सामग्री सारी ।
सोचे सास यों श्रक्ल खप्त हुई मारी ।
सासू ने बहू से क्षमा मांगी उस वारी ।
छाती लगा कहे दीनी मुझे सुधारी ।।मि.।।
जीवन भर तक क्रोध त्याग है मारे ।।१४।।

'प्राज्ञ' कृपा कहे 'सोहन' मुनि हितकारी ।
तजो क्रोध का जहर क्षमा लो धारी ।
बुद तेरस माघ की शंभू गढ़ मंझारी ।
दो हजार सैंतीस साल शुभकारी ।।मि.।।
जोड़ करी दी जनता मांहि सुनारे ।।१५।।



११ | सच्चा भक्त : भगवान से बड़ा

[तर्ज : छोटी कड़ी ...]

कहलाने मात्र से भक्त नहीं हो जावे ।
सर्व समर्पण करे भक्त कहलावे ।।टेर।।

सुनो लगाकर कान यह कथा सुनावें ।
भगवन से बढ़कर भक्त कौन कहलावे ।
जैनेतर ग्रन्थ में इसका वर्णन आवे ।
उसी कथा का भाव यहां दरसावे ।।मि.।।
सच्चा भक्त नहीं भौतिक सुख को चावे ।।१।।

अशोक पुरी में सुमन सेठ धन धारी ।
क्रोड़ों का धन है पास नगर में जहारी ।
परम विदुषी घर में सुन्दर नारी ।
मिली पुण्य के योग सामग्री सारी ।।मि.।।
किन्तु नहीं संतान सेठ दुख पावे ।।२।।

एक वक्त नारद ऋषि चलकर के वहां आवे ।
देख सेठ का हाल उसे फरमावे ।
किस कारण से यह मुख तेरा कुम्हलावे ।
तब सेठ नमन कर अपना हाल सुनावे ।।मि.।।
संतान बिना धन किसके काम में आवे ।।३।।

दे आश्वासन नारद उसको समझावे ।
भगवान पास जा तेरा काम बनावें ।
क्या कारण है हम इसे पूछकर आवें ।
यह कहकर ऋषिवर प्रभु पास में आवे ।।मि.।।
बात करी नारद प्रभु से [illegible] ।।४।।

सभी तरह से सेठ सुखी दिखलावे ।
संतान बिना नहीं चैन एक क्षण आवे ।
बोले भगवन् वह सात जन्म भी पावे ।
किन्तु सेठ संतान एक नहीं पावे ।।मि.।।
नारदजी आ सेठ को बात सुनावे ।।५।।

सारी बात सुन सेठ अति दुख पावे ।
क्या होगा मेरा ऐसे मन में लावे ।
ऋषि तो कहकर पुनः स्थान सिधावे ।
पीछे से महात्मा एक वहां पर आवे ।।मि.।।
घूमे नगर में यों आवाज लगावे ।।६।।

कोई मुझे सम्मान सहित ले जावे ।
घर ले जा रोटियां जितनी मुझे खिलावे ।
वह उतनी ही सन्तान सहज में पावे ।
सुनकर दौड़ा सेठ वहाँ पर आवे ।।मि.।।
सम्मान करी योगी को घर पर लावे ।।७।।

पांच रोटियां खाकर ऋषि सिधावे ।
संतान सेठ घर क्रम से पांच ही आवें ।
अब तो सेठ दिल गहरा आनन्द छाये ।
पुत्र पौत्र से सारा घर भर जाये ।।मि.।।
ऐसे समय में नारद ऋषि वहां आवे ।।८।।

देख सेठ का हाल ऋषि फरमावे ।
यह छोटे मोटे बालक कहाँ से आवे ।
तब सेठ सभी निज वीतक उन्हें सुनावे ।
सुनकर नारद मन में विस्मय लावे ।।मि.।।
कैसे हुआ यह नहीं समझ में आवे ।।९।।

चलकर नारद विष्णु पास में आवे ।
नारद को लखकर त्वरित ईश फरमावे ।
जल्दी जाकर मनुज कलेजा लावें ।
मुझे कलेजा सद्य यहां पर चावे ।।मि.।।
बिना कलेजा मेरा जी दुःख पावे ।।१०।।

सुनकर नारद सत्वर भू पर आवे ।
करे याचना नारद घर घर जावे ।
किन्तु कलेजा कोई न देना चावे ।
हताश होकर पुनः प्रभु घर जावे ।।मि ।।
मारग में कुटिया देख वहां पर आवे ।।११।।

योगी से अपनी बात नारद दरसावे ।
कहते ही कलेजा ले जावो फरमावे ।
लेकर कलेजा सीधा स्वर्ग में आवे ।
देख नारद को विष्णु यों दरसावे ।। मि.।।
सच्चा भक्त अपना सर्वस्व लुटावे ।।१२।।

ऐसे भक्तों की बात मिथ्या नहीं जावे ।
उनके वश भगवान स्वतः हो जावे ।
देख सेठ का हाल क्यों आश्चर्य लावे ।
मुझ से बढ़कर भक्त लोग कहलावे ।।मि.।।
ऐसे भक्त ही जग में नाम कमावे ।।१३।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि दरसावे ।
माया कपट तज सच्चा भक्त बन जावे ।
कथनी करनी में जरा फर्क नहीं आवे ।
उसका बेड़ा निश्चय पार हो जावे ।।मि.।।
भाग्य शाली ही ऐसे गुण अपनावे ।।१४।।

भीलवाड़ा से आसींद नगर में आये ।
जोड़ करी यह सब ही जन मन भाये ।
दो हजार सैंतीस माघ सुख दाये ।
बुद्ध अष्टमी बुद्धवार कहलाये ।।मि.।।
सच्चे भक्त ही जीवन सफल बनावे ।।१५।।



१२ | मच्छ क्यों हंसा

[तर्ज : जब तुम्हीं चले परदेश]

सब है बुद्धि का खेल जगत में मेल,
सुनो सब भाई बुद्धि की महिमा गाई ।।टेर।।

थी काश्मीर की महाराणी,
अति चतुर महागुण की खानी ।
पाले मच्छियां रंग बिरंगी लाई ।। बुद्धि. ।। १ ।।

मछियारा मच्छ एक लाया,
पूछा नर है झट कढ़वाया ।
मच्छ हंसा लख महाराणी शरमाई ।।२।।

हंसी का उत्तर नृप से चावे,
नृप बुला दीवान से फरमावे ।
नही आया उत्तर, नृप ने दिया सुनाई ।।३।।

सब माल जप्त करवा लूंगा,
एक माह में उत्तर दे दूंगा ।
दीवान कहे कर जोड़, करी नरमाई ।।४।।

है उदास चित्त घर पर आया,
तब पुत्र भेद सब ही पाया ।
कही पिता से बात उत्तर दूं लाई ।।५।।

सुत उत्तर लेने को जावे,
मारग में वृद्ध एक मिल जावे ।
चलो मेरे संग मेरे घर पर भाई ।।६।।

रस्ते में वृद्ध को दरसावे,
एक काम कहूं सो करवावे ।
राह कटे अरु थके न चलने मांहि ।।७।।

वृद्ध सहारा अब चावे,
सुनी वृद्ध मन में लावे ।
दिमाग फिरा यह मानव रहा दिखलाई ।।८

नदी पथ में जूते पहने,
छाया में छतरी को ताने।
पका खेत लख कहे खाया या नाहिं ॥९॥

वह गांव शहर को बतलावे,
अरु गांव को शहर कहे जावे।
आधा गांव तक वृक्ष है यों दरसाई ॥१०॥

बैठा हूं मैं तरुवर छाया,
यहां तलक तुम्हारे संग आया।
सहतीर होय मजबूत तो लेना बुलाई ॥११॥

पुत्री को घर जा बतलाई,
सुनकर मन में यों लाई।
है बुद्धिशाली नर दिया भेद समझाई ॥१२॥

बात कहे अरु लट्ठ लावे,
पानी में कांटे डग जावे।
छतरी करी दे बीट पक्षी छिटकाई ॥१३॥

कर्ज खेत पर तो नांहि,
शहर को गांव वे दरसाई।
करी नहीं मनुहार कोई भी भाई ॥१४॥

जब भोजन रच रच करवाया,
वह गांव शहर को बतलाया।
अच्छा साधन हो घर पर लेना बुलाई ॥१५॥

आप बुला उनको लावें,
झट उठा वृद्ध वहां पर जावे।
मनुहार करी ला दिया भवन बैठाई ॥१६॥

पुत्री नौकर को बुलवाई,
भोजन पय भेजा उस तांई।
कहना बरस अच्छा है ताल भरजाई ॥१७॥

नौकर राह में रोटी खाई,
पय पीकर ला दिया पकड़ाई।
बाई कही सो बात सभी दरसाई ॥१८॥

समझ गया एक रोटी खाई,
पय पी थोड़ा दिया लाई।
कंवर कहे जा कहना तू निज बाई ॥१९॥

मास घटा एक पय सूखा,
रहा हंसी से मैं भूखा।
सुनी भृत्य से बात समझ गई बाई ॥२०॥

नौकर से पूछ कर सब जानी,
विद्वान कंवर को लिया मानी।
आने का कारण पूछ बोलि उठा ताई ॥२१॥

मामूली बात दूं बतलाई,
पर शर्त मेरी लो अपनाई।
विवाह करो मुझ संग बात है याहि ॥२२॥

विवाह करी संग में लाया,
आकर पिता को दरसाया।
दीवाण जाकर नृप को यों दरसाई ॥२३॥

भेज पालखी मंगवा लो,
अब उत्तर उनसे तुम पालो।
उसी तरह महलों में ली बुलवाई ॥२४॥

सब दासी पास में बुलवाई,
एक खड्डे पर उनको लाई।
हिम्मत कर लांघो इस खड्डे को बाई ॥२५॥

बस एक दासी ही लांघ सकी,
बाकी सब ही वहाँ रुकी रही।
महाराणी से बोली पुरुष यह बाई ॥२६॥

यह शत्रु भेदिया लो मानी,
पूछा परखा और ली जानी।
अतः हंसा यों मच्छ दिया बतलाई ॥२७॥

दे खूब द्रव्य घर पहुंचाई,
बुद्धि से लिया आदर पाई।
'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि कथा सुनाई ॥२८॥



१३ | मातृ भक्त

[तर्ज : छोटी कड़ी ..]

जीवन सेवा से सुखी बनाओ भाई।
मातृ भक्ति की कथा सुनो चित्त लाई ।।टेर।।

संबलपुर में सबल सिंह महाराया।
प्रजा जनों पर रखता पूरी छाया।
दीन दुखी जन कोई द्वार पर आया।
खाली उसको कभी नहीं लौटाया ।।मि.।।
धन पाने का सार यही जग मांहि ।।१।।

विजया महारारणी है षट् गुण की धारी।
पतिव्रता पुण्यवान रूप रस वारी।
मधुर भाषी जन जन के मन को हारी।
रखती पूरा ध्यान आवे कोई द्वारी ।।मि.।।
सरल स्वभावी मान हृदय में नाहि ।।२।।

इसी नगर में रहे एक दुखियारी।
तीन पुत्र की मात बात कहूं सारी।
दरिद्रता का दुःख हिया में भारी।
पुत्रों का लखकर हाल दुःख अनपारी ।।मि.।।
सोचे पुत्र यों श्रम कर करे कमाई ।।३।।

कर मजदूरी तीनों पैसे लावें।
किन्तु उनसे पेट नहीं भर पावे।
श्रम अति करें पर भाग्य न जोर लगावे।
पाता है मानव पुण्य साथ में लावे ।।मि.।।
सत्य वात यह ज्ञानी जन फरमाई ।।४।।

उस समय नगर में तस्कर शोर मचावे ।
चुरा चुरा कर घर से माल ले जावे ।
नगर निवासी भूप को यों दरसावे ।
तंग हो गये नाथ ध्यान में लावें ।।मि.।।
अर्ज हमारी सुनिये ध्यान लगाई ।।५।।

नृप सुन करके आदेश यह सद्य लगाया ।
जो पकड़ चोर को मेरे पास ले आया ।
वो पावेगा धन खूब यहां मन चाया ।
ऐसा उद्घोष शहर में सद्य कराया ।।मि.।।
सुनी घोषणा जन जन के मन आई ।।६।।

पकड़ चोर को द्रव्य राज से पावे ।
करे परिश्रम खूब हाथ नहीं आवे ।
जुल्मी तस्कर धोका देकर जावे ।
आज तलक नहीं चोर नजर में आवे ।।मि.।।
कैसे पकड़ें चोर, गये घबराई ।।७।।

दोहा—तीनों बंधव में लघु, मन में करे विचार ।
मां का दुख मिट जायगा, पावें द्रव्य अपार ।।

भूख से पीड़ित कहे यों छोटा भाई ।
मुझे बांध, दो नृप के पास पहुंचाई ।
द्रव्य भूप से पालो तुम मन चाई ।
देना मुझको आप चोर बतलाई ।।मि.।।
कहता हित की बात सुनो दोऊ भाई ।।८।।

दोनों भ्रात कहे जमती नहीं हमारे ।
लघु बंधव को चोर चोर उच्चारें ।
माता का दुख तो करी परिश्रम टारें ।
किंतु कर्म तो लगे हुए हैं लारे ।।मि।।
विना भाग्य के मिले नहीं एक पाई ।।९।।

तंगी से होकर तंग वही कर लीना ।
बांध भ्रात को भूप समर्पण कीना ।
खुश होकर नृप द्रव्य बहुत ही दीना ।
देख द्रव्य को नयन भ्रात के भीना ।।मि.।।
विस्मित हो नृप पूछे बात क्या भाई ।।१०।।

केशव ने अपनी बात सत्य दरसाई ।
सारी बात सुन नृप के मन में भाई ।
सेवक सच्चे माता के सुखदाई ।
करी प्रशंसा नृप सभा के मांहि ।।मि.।।
ऐसी भक्ति हो सब पुत्रों के मांहि ।।११।।

जो पुत्र सदा ही मात पिता सुख चावे ।
वे ही निश्चय सेवा का फल पावे ।
लक्ष्मी दौड़ती उण घर मांहि आवे ।
सेवा करे वो मेवा निश्चय खावे ।।मि.।।
अतः भक्ति रस लीज्यो हिए जमाई ।।१२।।

"प्राज्ञ" प्रसादे 'सोहन' मुनि दरसावे ।
कथा श्रवण कर जो भी अमल में लावे ।
वह आनन्द अरु सौभाग्य सदा ही पावे ।
वुद्ध पांचा मिगसर गुलाबपुरा में गावे ।।मि.।।
दो हजार सैंतीस साल के मांहि ।।१३।।



१४ | बुद्धि पर : चार लड्डू सेठ पुत्र बेचे

[तर्ज : छोटी कड़ी]

बुद्धि का है खेल जगत में भाई।
बुद्धि से कितनी ऋद्धि लीनी पाई ।।टेर।।

कीर्तिपुर है शहर बड़ा गुलजारी।
कीर्ति सिंह भूपाल मुल्क में जहारी।
दीन दुखी की सेवा करे हर बारी।
नहीं लौटा खाली आया राज के द्वारी ।।मि.।।
अतः प्रजा गण रहे सदा गुण गाई ।।१।।

धन्ना पन्ना दो सेठ नगर के मांही।
सम्पति गहरी घर में कमी कुछ नांहि।
दोनों की नारियां ऐसी होड़ लगाई।
लड़का लड़की हो देंगे हम परणाई ।।मि.।।
आपस में करली बात जाणे कोई नांहि ।।२।।

धन्ना सेठ घर जन्म पुत्र ने पाया।
उत्सव करके तब सेठ अति हरसाया।
गुणपाल पुत्र का नाम सेठ दिलवाया।
योग्य हुआ तब शाला में भिजवाया ।।मि.।।
वहां जाकर पुत्र अब करता खूब पढ़ाई ।।३।।

किंतु कंवर को आवे नहीं पढ़ाई।
अन्तराय तब आयी उदय के मांहि।
कब बांधे जीव कब भोगे समझ लो भाई।
अतः कर्म से बचो ज्ञानी फरमाई ।।मि.।।
शिक्षक ने भी हार यहां पर खाई ।।४।।

अज्ञानी है पुत्र सेठ लिया जानी।
किंतु बात यह रक्खी सबसे छानी।
कंवर रूप में देव कंवर लो मानी।
लखकर जन जन बात करे चऊं कानी ॥मि.॥
कंवर रूप की महिमा घर घर छाई ॥५॥

पन्ना सेठ घर जन्मी सुन्दर बाई।
पढ़ा लिखा कर दीनी योग्य बनाई।
पत्नी ने सेठ को अपनी शर्त बताई।
सुनी सेठ सब बात गया हरसाई ॥मि.॥
बोला तुमने अच्छी शर्त लगाई ॥६॥

धनाढ्य घर में अपनी बाई जावे।
यदि सेठ हां भरले काम बन जावे।
अभी वहां जा कहूं सेठ मन भावे।
पक्का कर सम्बन्ध बाई परणावें ॥मि.॥
सेठाणी कहे शंका कुछ है नाहीं ॥७॥

सेठ कहे सेठाणी से तुम जाओ।
मिलो सखी से अपनी शर्त बताओ।
पक्की करके बात पुनः घर आवो।
यह काम तुम्हारा तुम्हीं इसे कर आओ ॥मि.॥
सेठाणी सुन धन्ना सेठ घर आई ॥८॥

सेठाणी से मिली शर्त दरसाई।
सुनते ही उसको बात याद में आई।
आपस में दोनों निर्णय करी सगाई।
वापिस आकर पति को बात सुनाई ॥मि.॥
दोनों ओर ही खुशियां दिल में छाई ॥९॥

चंद समय पश्चात बाई परणाई।
विवाह करी ने सुन्दर पति घर आई।
पति रूप लख मन में अति हरसाई।
पर भोला पन लख दिल मांहि दुख पाई ॥मि.॥
अब तो रहना पति साथ में यांहि ॥१०॥

धन्ना सेठ सेठाणी पर भव जावे।
पीछे सब व्यापार ठप्प हो जावे।
रही सम्पति सारी लोग खा जावे।
भोलापन का सब जन लाभ उठावे ।।मि.।।
घर में द्रव्य था उसको लिया बचाई ।।११।।

सुन्दर खर्चा लखकर मन में लावे।
पति से बोली घर धन घटता जावे।
अतः करो कुछ काम खर्च चल जावे।
पति कहे क्या करूँ काम बतलावें ।।मि.।।
बढ़िया लड्डू सुन्दर दिये बनाई ।।१२।।

खुशबू युक्त दे चार लड्डू बतलाया।
सवा रुपये कीमत है यों दरसाया।
जा बैठा उसको जहां स्थान बतलाया।
नर नारी केई उस रस्ते पर आया ।।मि.।।
सेठाण्यां चार तब गुरु दर्शन को आई ।।१३।।

बातें करती वापिस घर पर जावें।
चारों के घर में कन्या बड़ी हो जावें।
आपस में घर की दुख गाथाए गावें।
मिले योग्य तो उसके संग परणावें ।।मि.।।
इतने में गुण पाल नजर गया आई ।।१४।।

देख कंवर को चारों वहां चल आई।
पूछा परिचय मन में विस्मय लाई।
जैसा रूप वैसा गुण है के नांहि।
करें परीक्षा ऐसी मन में लाई ।।मि.।।
चारों ने चारों लड्डू लिये उठाई ।।१५।।

कीमत पूछी रुपया सवा बतलाया।
चारों के होते पांच उन्हें दरसाया।
सुनकर बोली मूल्य ठीक बतलाया।
कीमत देंगे भवन हमारे आयां ।।मि.।।
अभी नहीं है पास हमारे पाई ।।१६।।

पहली कहे जहां घर में घर वहां आना ।
नरम नरम है दूजी घर पर जाना ।
कठिन कठिन है तीजी का पहचाना ।
चौथी कहे हो रंग में रंग वहां आना ।।मि.।।
कहकर चारों अपने भवन सिधाई ।।१७।।

घर आकर वह सारी बात सुनाई ।
सुनकर नारी मन मांहि हरसाई ।
बोली चिन्ता की कोई बात है नांहि ।
खूब ठाठ से भोजन दिया जीमाई ।।मि.।।
पैसे लाना उस घर से देऊँ बताई ।।१८।।

घर में घर है श्रीफल तरु जहां पावें ।
उसी स्थान से पैसे मांग कर लावें ।
गया मांगने सेठाणी दरसावे ।
राजा बैठे पाट तभी घर आवें ।।मि.।।
आ घर नारी को दीनी बात सुनाई ।।१९।।

नरम नरम जहां दाख वेलड़ी पावें ।
उसी स्थान पर आप मांगने जावें ।
गया मांगने सेठाणी दरसावे ।
काष्ट अश्व के लोह लगाम लगावे ।।मि.।।
तभी माँगने आना पहले नांहि ।।२०।।

कठिन कठिन है वृक्ष सुपारी मानो ।
उसी स्थान पर समझो अब है जानो ।
गया मांगने बोली आपको आणो ।
गंगा जमुना रुके दाम तव पाणो ।।मि.।।
पुनः लौट आ दीनी बात सुनाई ।।२१।।

मेंहदी झाड़ जहां रंग में रंग बताया ।
वहाँ जा के मांगना ऐसे नार दरसाया ।
गया मांगने सेठाणी फरमाया ।
आना गगन में फूल उदय में आया ।।मि.।।
चारों स्थान पर घूमा मिली नहीं पाई ।।२२।।

हताश हो घर दीनी बात सुनाई।
जा आया सब ठोर मिली नहीं पाई।
नारी बोली क्यों घबराओ मन मांहि।
सब आ जावेंगे दाम रहे नहीं पाई ।।मि.।।
दिया शाम का भोजन उन्हें जीमाई ।।२३।।

पाट बैठ गया चन्द्र उदय में आया।
तभी नार ने पति को वहां भिजाया।
सेठाणी बोली दूंगी अन्य से पाया।
यह सुनकर वापिस निज घर पे चल आया ।।मि.।।
दूजे घर में भेजा बात समझाई ।।२४।।

काष्ट अश्व के लौह लगाम लगावे।
व्यापार बन्द कर ताला दे घर आवे।
दस बजे रात में सेठाणी घर जावे।
पहली मुआफिक दूजी भी दरसावे ।।मि.।।
कंवर पुनः आ दीनी बात सुनाई ।।२५।।

गंगा जमना हके भेद बतलाया।
दोनों मार्ग हों बंद तभी बुलवाया।
अर्द्ध रात्रि में तीजी के घर आया।
उसने भी कह उसी तरह समझाया ।।मि.।।
वापिस आकर सारी बात बतलाई ।।२६।।

गगन फूल जब शुक्र नजर में आवे।
उस वक्त गया वहां चारों ही मिल जावे।
एक थाल में केई सामग्री लावे।
पांच रुपये उस मांहि रख लावे ।।मि.।।
ले लो आप इण में से हो मन चाई ।।२७।।

मेंहदी लच्छे कुंकुम उसमें लख कर
सोचा इससे ले लूं दाम उठाकर।
इतनी चीजें क्यों लाई इसमें रखकर।
रहस्य होगा आऊं पुनः घर जाकर ।।मि.।।
शौच निवृत्त हो लूंगा पुनः उठाई ।।२८।।

घर नारी से आकर बात सुनाई।
वह बोली मेंहदी लेना आप उठाई।
वापिस आकर मेंहदी ली कर मांहि।
चारों ने अपनी चार कन्या परणाई ।।मि.।।
लाखों का देकर माल दिया पहुंचाई ।।२९।।

चार बहू और गहरा धन ले आया
देख नार का चित्त अति हरसाया।
पांचों बहनें मिली परिचय पाया।
काम सभी अब सुन्दर ढंग पर आया ।।मि.।।
पहले जैसा दिया व्यापार चलाई ।।३०।।

उस समय विचरते धर्म घोष मुनि आये।
दर्शन हित परिवार सेठ संग जाये।
बंदन कर बैठे गुरु वाणी फरमाये।
ले लो लाभ नरभव मुश्किल से पाये ।।मि.।।
सेठ आदि लिए श्रावक व्रत सुखदाई ।।३१।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि हर बारी।
चेतावे कर लो धर्म ध्यान सुखकारी।
बांध सरेरी संघ है साताधारी।
चरित्रवान संतों का आज्ञाकारी ।।मि.।।
यहां धर्म ध्यान की फुलवाड़ी सरसाई ।।३२।।



१५ आचार शुद्ध : गांधीजी व पादरी

[तर्ज : राधे०]

आचार शुद्ध व्यवहार शुद्ध की, जन मन ऊपर छाप पड़े ।
बिना शुद्धि के उपदेशक हो, चाहे वे आचार्य बड़े ।।१।।

गांधी गये बिलायत में तब, एक पादरी उनके पास ।
करके बात यों सोचे मन में, इन्हें बुलाऊं निज आवास ।।२।।

कहे आप हर रविवार का, आमन्त्रण स्वीकार करें ।
गांधी बोले शाकाहार ही, भोजन होगा यहां मेरे ।।३।।

सोचे पादरी गांधी जी यदि, स्वयं ईसाई बन जावे ।
तब तो सारा भारत ही, ईसा मसीह मत अपनावे ।।४।।

हर रवि को गिरजा से पादरी, गांधी जी के संग आवे ।
चर्चा करते खुलकर दोनों, स्व स्व पक्ष को बतलावे ।।५।।

बच्चे भी वहां इनकी बात में, काफी रस आकर लेते ।
सुन गांधी के वचन प्रभावित, मन के मांहि वे होते ।।६।।

भोजन निरामिष एक रवि को, बनता लख बालक भोले ।
आज निरामिष भोजन कैसे, पिता सामने आ बोले ।।७।।

पिता पादरी कहे गांधी जी, प्राणी मांस को नहीं खाते ।
अपने सम सब को पीड़ा हो, ऐसी बातें बतलाते ।।८।।

बालक बोले ठीक कह रहे, हम भी मांस नहीं खायेंगे ।
प्राणी घात से मांस बने, वृक्षों से हम पल जायेंगे ।।९।।

यह सुनते ही सोचे पादरी, उलटा घर में कहर ढहा ।
मैं तो खींचना चाहता उनको, मुझ पुत्रों पर असर हुआ ।।१०।।

यदि गांधी दो चार वक्त भी, मेरे घर पर आ जावे।
ये बालक तो निश्चय, उनके अनुयायी ही बन जावे ।।११।।

आये गांधी रविवार को, कहे पादरी अपना हाल।
धावा बोला मेरे घर पर, अच्छी चली आपने चाल ।।१२।।

मैं चाहता था बना लेऊंगा, अब गांधी को ईसाई।
काम हो गया उल्टा यहां पर, सारी घटना दरसाई ।।१३।।

निमन्त्रण वापिस लेता हूं, नहीं हुई मन की चाई।
समझा असर आचरण का हो, थोथी बातों का नांहि ।।१४।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, आकर्षण जब बढ़ता है।
कथनी करनी सम हो तब ही, रंग दूजों पर चढ़ता है ।।१५।।



१६ | भोज राजा : छः टका

[तर्ज : छोटी कड़ी]

शांति खोजता फिरे जगत के मांहि।
संतोष बिना नहीं शांति मिले कहीं भाई ॥टेर॥

धारा नगरी का भूप भोज महाराजा।
अश्व घुमावन काज जंगल में आया।
लकड़हारा सिर पर गट्ठर लाया।
तन का गठ मजबूत मस्ताई छाया ॥मि.॥
नृप लखकर उसको ऐसी बात सुनाई ॥१॥

कहो नाम क्या अपना दो बतलाई।
तब कहा सुनो मैं राजा भोज हूं भाई।
सुनकर नृप यों मन में विस्मय लाई।
यह भोज कौनसा प्रगटा है यहां आई ॥मि.॥
कैसे भोज हो दो मुझको दरसाई ॥२॥

वह बोला कमी नहीं मेरे पास में कांई।
लाकर भारी बेचूं नगरी मांहि।
कितने पाते दाम भूप दरसाई।
वह बोला टका छः नित ही लेऊं कमाई ॥मि.॥
सुनकर भूप के मन में ऐसे आई ॥३॥

भरा खजाना लाखों नित ही पावे।
फिर भी नहीं संतोष मेरे मन आवे।
फिर पूछा उसको कैसे खर्च में लावे।
इनका लेवो हिसाव अभी वतलावे ॥मि.॥
छः टके को वांटू छः हिस्से के मांहि ॥४॥

बोहरा, आसामी, मंत्री, खजाना, मांहि।
खुद का अतिथि सत्कार में देऊं लगाई।
एक एक टका दूं सदा खर्च के मांहि।
सुनकर भूप हो विस्मित यों दरसाई ॥मि.॥
तेरी रहस्यमय वात समझ नहीं आई ॥५॥

मेरे बोहरे हैं मात पिता सुखदाई।
पाल पोस कर दीना योग्य बनाई।
पुत्र पुत्री आसामी भविष्य के मांहि ।।मि.।।
मंत्री नार है चाहे सदा भलाई ।।६।।

बचा टका एक रहे खजाना मांहि।
बुरे वक्त वह मेरे बने सहाई।
खाना पहनना स्वयं खर्च के मांहि।
अतिथि खर्च में एक दूं टका लगाई ।।मि.।।
गृहस्थ धर्म है अतः लूं सेवा बजाई ।।७।।

सुनकर उसकी बात भूप मन लाया।
कितना है हुशियार ठीक समझाया।
जीवन सुखी यह कितनी मस्त है काया।
चिन्ता का नहीं है लेश हृदय में लाया ।।मि.।।
मेरे जीवन अरु इसके जीवन मांहि ।।८।।

कितना है अन्तर देख रहा हूं यांहि।
चिन्ता ग्रस्त हूं लाखों का धन पाई।
पर छः टकों से भोगे यह मस्ताई ।।मि.।।
आज यहां मैं अच्छी शिक्षा पाई ।।९।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि दरसाई।
कथा श्रवण कर लीज्यो हिये जमाई।
दो हजार साल सैंतीस अंटाली मांहि।
बंसत पंचमी ठाठ से यहां मनाई ।।मि.।।
तप जप की श्रद्धांजली गुरु को चढ़ाई ।।१०।।



१७ | गर्व त्याग : अनुभव से

[तर्ज : छोटी कड़ी]

सदा गरीबी रखे याद के मांहि।
उसके जीवन में गर्व रहे कुछ नांहि ।। टेर ।।

सुजालपुर में लक्खी सेठ धन धारी।
गृह कार्य में दक्ष सुशीला नारी।
नगर मांहि विख्यात सेठ व्यापारी।
लाखों का व्यापार चले हर बारी ।।मि.।।
फिर भी तन पर रखता पूरी नरमाई ।।१।।

जिनका है जीवन सादा पर उपकारी।
अभाव ग्रस्त को लेता है संभारी।
गुप्त दान दे सदा दुखी दुःख टारी।
नहीं किंचित भी मान सरलता धारी ।।मि.।।
बोले मीठे वचन सभी से जाई ।।२।।

रस्ते में होकर सेठ हाट पर जावे।
फूटा कपाल यों बालक कह बतलावे।
तुतली भाषा सुन सेठ अति मुस्कावे।
नहीं क्रोध का लेश हृदय में आवे ।।मि.।।
व्यवहार सेठ का सब को है सुखदाई ।।३।।

एक वक्त सेठ जी जावे बाग के मांहि।
उनके पीछे कुछ विद्यार्थी रहे जाई।
घेरा सेठ को अपनी बात सुनाई।
आप हमारी शंका देवो मिटाई ।।मि.।।
विशुद्ध जीवन कैसे लिया बनाई ।।४।।

विनय, सादगी, दान भाव किम पाये ।
फूटा कपाल उपनाम कहां धरवाये ।
शंका है आपसे हम मिटवाना चाहें ।
सेठ उसी क्षण उनको पास बैठाये ।।मि.।।
अब कहूं बात मैं लेना ध्यान के मांहि ।।५।।

लगा कपाल के हाथ उन्हें बतलावे ।
सारे सद्गुण का मूल यही दरसावे ।
जिस समय हाथ मेरा इस ऊपर जावे ।
उस समय दृश्य सब मेरे ध्यान में आवे ।।मि.।।
जीवन की घटना देऊं तुम्हें सुनाई ।।६।।

मेरी माता अरु तात गरीबी मांहि ।
बड़े कष्ट से रहे थे दिवस बिताई ।
खाने को कुछ भी साधन घर में नांही ।
पास कोटिपति रहे अभी चंद भाई ।।मि.।।
सात मंजिला भवन लिया बनाई ।।७।।

मैं था बालक वय सात वर्ष के मांहि ।
खेला करता सेठों के बाल संग जाई ।
वे लाते चीजें घर से खाने के तांई ।
देख उन्हें गया मेरा मन ललचाई ।।मि.।।
मैं भी मांगता मात पास में जाई ।।८।।

पिता गये पर लोक रहा मैं भाई ।
मुझे मांगता देख मात समझाई ।
वे हैं सेठों के पुत्र द्रव्य घर मांहि ।
नहीं है मेरे पास एक भी पाई ।।मि.।।
फिर भी देती चीज मात कुछ लाई ।।९।।

कुछ दिनों बाद आमों की मौसम आई ।
देख अन्य के पास गया मचलाई ।
माता के पास आ अपनी बात सुनाई ।
सुन माता के मन में ऐसे आई ।।मि.।।
निश दिन का कहूं दुःख सेठ घर जाई ।।१०।।

खाने की चीजें घर के मांहि खिलावे ।
ताकि बच्चा मम नही देखने पाये ।
लेकर अपनी बात सेठ घर जावे ।
सेठ दम्पति घर में बैठे पावे ।।मि.।।
मिल धनपति से अपनी बात सुनाई ।।११।।

दिन दूने आप धन मांहि बढ़ते जावें ।
हर समय आपकी उन्नति दिल से चावें ।
फले फूले परिवार सुखी हो जावे ।
बच्चे आपके लखकर जी सुख पावे ।।मि.।।
विनय करूं एक सुनिये ध्यान लगाई ।।१२।।

अपने बच्चों को जो भी आप खिलावें ।
घर में बैठा कर खिला उन्हें निकलावें ।
बच्चों के हाथ में देख बाल मचलावे ।
भोला है समझे नांय खूब समझावे ।।मि.।।
अतः कृपा कर दो मुझ कष्ट मिटाई ।।१३।।

सेठाणी क्रोध में कहे क्या बात सुणाई ।
लड़के मेरे खायेंगे बाहर जाई ।
अरे ! तू होती कौन जो करे मनाई ।
धन मद में दी कितनी ही गाल सुनाई ।।मि.।।
सुनकर उनके वचन मात दुःख पाई ।।१४।।

नहीं बोल सकी दिल दर्द ले घर में आई ।
आते ही आम की बात मैंने दरसाई ।
खाऊंगा आम कह झगड़ा दिया मचाई ।
मां भरी रोष में मुझको दिया सुनाई ।।मि.।।
भग जा नहीं तो दूंगी खून चटाई ।।१५।।

मैं था अज्ञानी समझा बात को नाँही ।
फिर भी माँग लख माता रोष भराई ।
पत्थर उठाकर मारा सिर के मांई ।
खून खलक निकला तन गया रंगाई ।।मि.।।
फिर आया ध्यान तब माता अति घबराई ।।१६।।

किया खूब उपचार ही दवा लगाई ।
उसके बाद ही मेरे समझ में आई ।
विद्यार्थियों को सिर की चोट बताई ।
चोट लगी क्या अन्तर आंख खुलाई ।।मि.।।
फूटा कपाल कहे तब से बालक भाई ।।१७।।

तब से दुराग्रह रहा न मन के मांही ।
माता ने एक दिन सारी कथा सुनाई ।
सुनकर उसकी बात हृदय में जमाई ।
परिवर्तन होता समय सही दरसाई ।।मि.।।
है अब भी उसका असर सुनो दिल मांही ।।१८।।

साधन हीन जन कैसे वक्त गुजारे ।
अपने अनुभव से समझूं सुख दुःख सारे ।
वह शिक्षा हर क्षण अब भी दिल में मारे ।
अतः करूं संभार सभी घर जा रे ।।मि ।।
यह तो काम है अपना क्या अधिकाई ।।१९।।

धन पाने का सार नहीं अकड़ाई ।
दान पुण्य में देवें इसे लगाई ।
तब ही मिल पाता लाभ सुनो हे भाई ।
नहीं तो धन तज जाते पर भव मांहि ।।मि.।।
सजग रहे वही धन से यश ले पाई ।।२०।।

द्रव्य दिखावा धन विष है जग मांही ।
नहीं होती उससे कभी समाज भलाई ।
अतः दिखावा तजो सभी हित लाई ।
सादा जीवन बना रहे जग मांही ।।मि.।।
विद्यार्थियों को सेठ ने बात सुनाई ।।२१।।

इसी तरह का जीवन सभी बनावे ।
करें प्रतिज्ञा ऐसे गुण अपनावे ।
करी प्रशंसा मुख से सब गुण गावे ।
नमन करी सब अपने स्थान सिधावे ।।मि.।।
धन्य बने शिक्षा से जीवन बनाई ।।२२।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि दरसावे ।
दो हजार साल सैंतीस माघ मन भाये ।
सुदी सप्तमी मंगल को रच गाये ।
विचरत ठाणा पांच खेजड़ी आये ।।मि.।।
कथा श्रवण कर लीज्यो हिए जमाई ।।२३।।



१८ श्रद्धा पर : चोर आकाश में उड़ा

[तर्ज : नेमजी....]

श्रद्धा रख जीवन बन जावे श्रद्धा से मुक्ति पा जावे ।।टेर।।

सेठ जिन दास श्रावक नामी ।
नहीं है घर में कुछ खामी ।
देव गुरु धर्म शुद्ध पामी ।
व्रतों को पाले गुणधामी ।

दोहा—पुत्र एक गुणपाल है, चाले आज्ञा मांय ।
एक दिवस निज पिता पास में, बुला उसे समझाय ।।मि.।।
बात कहूं ध्यान मांहि लावे ।।१।।

मंत्र एक मेरे पास मांहि ।
तुझे मैं देऊं बतलाई ।
सिद्ध कर पावो सिद्धाई ।
मौज से उड़ो गगन मांहि ।

दोहा—मंत्र बड़ा नवकार है, श्रद्धा इस पर लाय ।
विधि बता दूं अभी सभी मैं, काम सफल हो जाय ।।मि.।।
शंका नहीं मन मांहि लावे ।।२।।

अंधेरी चउदस जब आये ।
निशा में वन मांहि जावे ।
अग्नि से कुण्ड भरवावे ।
ऊपर एक छीका लटकावे ।

दोहा—कच्चे सूत के तार को गिन करके नवकार ।
एक एक को जावे काटता मन में हिम्मत धार ।।मि.।।
सिद्ध हो पिता यों दरसावे ।।३।।

विचार कर चटपट उड़ जावे।
कंवर तब वन मांहि जावे।
कहा वैसे ही करवावे।
शंका यों मन मांहि लावे।

दोहा—अग्नि मांहि गिर पडूं, जलकर होऊं राख।
बार बार यों पड़े उतरते, कंवर गया है थाक ।।मि.।।
चुराकर चोर रतन लावे ।।४।।

पूछकर चोर बात जानी।
हृदय में श्रद्धा वह आनी।
सिद्ध करूं मन में यह ठानी।
रतन दे लिया मंत्र मानी।

दोहा—चंद समय में सिद्ध कर, उड़ा गगन के मांय।
पीछे से आ पकड़ कंवर को, राज सभा में लाय।।मि.।।
कंवर मन में अति दुःख पावे ।।५।।

भूप के क्रोध हृदय छावे।
कोष से चुरा के ले जावे।
शूली पर इसको लटकावे।
नगर में सबको दिखलावे।

दोहा—ले जाते हुए कंवर पर, गया चोर का ध्यान।
शूली हित मम उपकारी को ले जाते अनजान ।।मि.।।
गगन में खड़ा हो दरसावे ।।६।।

उपल यह मेरे कर मांहि।
छोड़ दो तस्कर यह नांहि।
बात यों उसने दरसाई।
छोड़ दिया सुनि भूप वांहि।

दोहा—संदेह दिल में आ गया, पाया दुःख अपार।
'सोहन' मुनि जो संदेह लाता, जाता करणी हार ।।मि.।।
भव्य जन श्रद्धा मन लावें ।।७।।

दुल्लहा परम सदा गावे।
आगम में वीर फरमावे।
इसके बिन मुक्ति नहीं पावे।
धर्म का सार बतलावे।

दोहा—गुणताली आसाढ़ में, सुद सातम रविवार।
साड़ी स्टोर हरिमार्ग में, आगे [illegible] विहार ।।मि.।।
आठ रख श्रद्धा शुभ भावे ।।८।।

[illegible]

१९ | धर्म बिन जीवन व्यर्थ

[तर्ज : नेमजी ...]

गया जो वक्त नहीं आवे, धर्म बिन समय व्यर्थ जावे ।।टेर।।

नगर एक सागर पुर मांहि ।
सेठ धनदास बसे वहां ही ।
सम्पत्ति गहरी घर मांही ।
रहा वह धन मद में छाई ।

दोहा—धर्म क्रिया से दूर है, धन से पूरा प्यार ।
कंवर भानु भी उनके सम ही, रखता निज व्यवहार ।।मि.।।
न्याय और नीति नहीं भावे ।।१।।

श्रावक एक धर्मदास नामी ।
नहीं है जिनके कुछ खामी ।
गुणावली नारी सुख धामी ।
शीलवती पुत्री वह पामी ।

दोहा—आठ वर्ष की उम्र में, जाती स्थानक मांय ।
संत सती की सेवा करके, धर्म मर्म को पाय ।।मि.।।
श्रद्धा दिल गहरी आ जावे ।।२।।

विवाह के योग्य हुई बाई ।
भानु सग दीनी परणाई ।
बाई चल सासरे आई ।
व्यवस्था लखकर दुःख पाई ।

दोहा—धर्म बिना घर शून्य है, कीना हृदय विचार ।
सास ससुर पति को समझाके, कैसे करे उद्धार ।।मि.।।
सोच यों पति को समझावे ।।३।।

एक दिन गुणी मुनि आवे।
यौवन वय शांत दांत भावे।
देखकर बहू हर्ष लावे।
मुनि को ऐसे दरसावे।

दोहा—अभी तो प्रभात है पता काल का नाय।
सुन मुनिवर की बात को धन्य धन्य दरसाय ॥मि.॥
आगे बहू अपनी बतलावे ॥४॥

आपका ऐसा है व्यवहार।
हमारे घर में बासी आहार।
नया नहीं भोजन हुआ तैयार।
बात सुन मुनि बोले उस बार।

दोहा—सास ससुर पति आपकी आयु दो बतलाय।
खुद भी बीस वर्ष की किन्तु बारह वर्ष बतलाय ॥मि.॥
पति वर्ष पांच बतलावे ॥५॥

सासुजी छः माह के जानो।
ससुर का जन्म मति मानो।
सही है मारो बतलाणो।
रत्ति भर झूंठ नहीं जाणो।

दोहा—मुनिवर लेके आहार को, गये हैं स्थानक मांय।
सुनी ससुर क्रोध में आकर बहू को यों फरमाय ॥मि.॥
असत्य कहे, शर्म नहीं आवे ॥६॥

भोजन बिन सेठ हाट जावे।
पुत्र को सब कही बतलावे।
नार तुझ कुलटा दिखलावे।
कहूं नहीं घर में रह पावे।

दोहा—पति नार के पास आ, कहे किया अपमान।
मात पिता की मुनिवर आगे कहते रखा न ध्यान ॥मि.॥
बोली वह मुनि पास जावे ॥७॥

हकीकत मुनिवर दरसावे।
आप वहां समाधान पावे।

पिता अरु पुत्र वहां जावे।
सेठ सब मुनि को दरसावे।

दोहा—मुनिवर बोले सेठजी, वह पूछी थी वाय।
लघुवय में क्यों संयम लीना, पता काल का नाय ।।मि.।।
कही वह बासी हम खावें ।।८।।

मुनि कहे उसने बतलाया
पूर्व का सुकृत संग लाया।
यहां नहीं धर्म ध्यान ध्याया।
इसी से बासी दरसाया।

दोहा—बात कही सब सत्य है, आगे की फरमाय।
मुनिवर बोले उसे पूछ लो, देगी वह बतलाय ।।मि.।।
पिता अरु पुत्र स्थान आवे ।।९।।

ससुर कहे मेरा जन्म नांहि।
कैसे यह तैंने बतलाई।
बहू कहे धर्म क्रिया कांई।
करी नहीं इस भव के मांहि।

दोहा—धर्म बिना क्या जन्म है, नरभव उत्तम पाय।
पशु पक्षी वत् पाकर जीवन, दीना व्यर्थ गमाय ।।मि.।।
बात सुन ससुर समझ जावे ।।१०।।

सास के धर्म ध्यान मांहि।
मास छः बीते हैं यांहि।
पति अरु अपना भेद गाई।
दीना वह सब ही बतलाई।

दोहा—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, धर्म करो सुखदाय।
धर्म किये बिन यह नर जीवन केवल शून्य गिणाय ।।मि.।।
ज्ञानी जन ऐसे दरसावे ।।११।।



२० | नियम पर

[तर्ज : नेमजी….]

नियम ले शुद्ध भाव चाले ।
वही नर सुख सम्पति पाले ।।टेर।।

नगरी एक कौशाम्बी भारी ।
भूपति प्रताप सुखकारी ।
प्रजा का ध्यान हर बारी ।
रखे; दे दीन दुःख टारी ।

दोहा—एक समय इस नगर में, ज्ञानी गुणी अणगार ।
ग्राम नगर पुर विचरत आये भवि जीवां हितकार ।।मि.।।
सुणी सब दर्शन को चाले ।।१।।

जनता उमड़ उमड़ आई ।
परिषद् लखकर गुरुराई ।
त्याग की महिमा बतलाई ।
वाणी सुन जनता हरसाई ।

दोहा—उस ही क्षण एक सेठजी, गुरु चरणों में आय ।
सदुपदेश दे आज आपने, दीना मुझे जगाय ।।मि.।।
जीवन को त्याग मांहि ढ़ाले ।।२।।

इच्छा हुई लेऊं त्याग अपनाय ।
करा दो नियम मुझे गुरु राय ।
अति प्रिय सदा काम में आय ।
वही दो जमींकंद छुड़वाय ।

दोहा—गुरुवर बोले सोच लो, पहले हिरदय मांय ।
इधर उधर करने का अवसर, फिर सन्मुख नहीं आय ।।मि.।।
शपथ फिर शुद्ध आप पालें ।।३।।

सोचकर नियम लूं गुरुराय।
तजूं नहीं चाहे प्राण भी जांय।
जमींकंद दीना तब छुड़वाय।
नियम ले सीधा घर पर आय।

दोहा—निज नारी के सामने, करी नियम की बात।
छोड़ दिया है मैंने आज से, जमींकंद नहीं खात ।।मि.।।
मेरे लिये सब्जी यह टालें ।।४।।

बात सुन रोष मांहि आई।
नार यों पति को दरसाई।
गये क्यों संत पास मांहि।
काम है उनके तो योंहि।

दोहा—खैर ! चले गये आप तो, कीना क्यों यह त्याग।
नियम यहां पर नहीं चलेंगे, छोड़ो त्याग का स्वांग ।।मि.।।
भाणे में रक्खूं वह खाले ।।५।।

बनाऊं जमींकंद का साग।
देखलूं आज तुम्हारा त्याग।
खाये बिन कहां पर जावो भाग।
बोल रही नारी ज्यूं हो नाग।

दोहा—साग बना जमींकंद का, रक्खा भाणे मांय।
खाना है तो खालें इसको, वरना उठ नहीं पाय ।।मि.।।
सेठ चोतरफा निहाले ।।६।।

सेठ कहे लादे कुछ आचार,
साग नहीं खाऊं सही विचार।
कड़क कर बोली ऐसे नार।
साग तो खाना है इस बार।

दोहा—बात कहूं सो मान लो, बदली हूं खूंखार।
लोक लाज से नहीं डरूंगी, सुनो बात का सार ।।मि.।।
तुम्हारी कुछ भी नहीं चाले ।।७।।

शेर जिम गर्ज रही है नार।
सेठ यों मन में करे विचार।

प्राण का चाहे हो अपहार।
तोड़ूं नहीं लीनी गुरु की कार।

दोहा—घर में सब सामान है, गुड़ शक्कर आचार।
किन्तु आज तो बदल गई यह, है कंकाली नार ॥मि.॥
लगा दिये सबके ही ताले ॥८॥

शक्ति जब नारी की जानी,
सोचे यहां रोटी नहीं खानी।
भोजन तज जाने की ठानी।
खड़ा हुआ ऐसे सेठ मानी।

दोहा—जाते सेठ को देखकर, भरी रोष में नार।
उठा हाथ में जलती लकड़ी, हुई पति की लार ॥मि.॥
नार को आती निहाले ॥९॥

सेठ मन मांहि घबराये।
नार बक झक करके जावे।
ग्राम के बाहर सेठ आवे।
रात वहीं वन में सो जावे।

दोहा—मध्य निशा के बाद में स्वप्न सेठ को आय।
मानों नार छाती चढ़ बैठी, अब रही कंठ दबाय ॥मि.॥
बोल रही सब्जी तू खाले ॥१०॥

यदि तू हो गया अब इन्कार।
समझ ले दूंगी तुझको मार।
कंठ को दबा के बारम्बार।
बोल अब क्या कहे तू उच्चार।

दोहा—घबरा करके सेठ ने दीना शब्द निकाल।
खाऊं खाऊं खा लूंगा अब, कहता सुनले हाल ॥मि.॥
शब्द सुन चोर निहाले ॥११॥

लाखों का द्रव्य चोर लाये।
बैठ वहां पाती करवाये।
शब्द ये कान में आये।
चोर चौकन्ने हो जाये।

दोहा—समझा यहां पर भूत है, भूखा हमको खाय।
धन माल को छोड़ सद्य ही, दौड़ वहां से जाय ।।मि.।।
चोर की कला नहीं चाले ।।१२।।

प्रातः जब सेठ जी जागे।
पड़ा धन लाखों का आगे।
प्रताप यह नियम का सागे।
करूं नहीं ग्रहण जिन्हें त्यागे।

दोहा—धन कंचन को बांधकर, लीनी गांठ बनाय।
सिर पर रखकर चला वहाँ से, मन में हर्ष भराय ।।मि.।।
सोचा यों नियम गुण गाले ।।१३।।

सेठाणी मन में घबराई।
छोड़ पति चले गये कांई।
रात भर नींद नहीं आई।
कल्पना केई मन लाई।

दोहा—यदि न आये सेठजी, क्या होगा मुझ हाल।
नियम लिये तो लिये खुशी से देती बात को टाल ।।मि.।।
रोष में काम किये काले ।।१४।।

चिन्ता में बैठी है नारी।
पति चल आये उस वारी।
हुआ है हर्ष हृदय भारी।
देख सन्मुख आई नारी।

दोहा—गठरी लख कर शीश पर, बोली वह तत्काल।
इतना वजन उठाकर लाये, क्या है इसमें माल ।।मि.।।
उतारी गांठ निहाले ।।१५।।

देखकर लाखों का धन माल।
सोचे अब हो गये खूब निहाल।
सेठ ने सुना दिया सब हाल।
सुनकर बोली यों तत्काल।

दोहा—गुरु दर्शन को नित्य ही, जाओ नियम लो धार।
सोचा सेठ ने स्वार्थ का जग, नहीं है इसमें सार ।।मि.।।
पहले क्यों तूने विघ्न डाले ।।१६।।

देखलो कैसा गुरु प्रभाव।
नियम दे मिटा दिया दुखदाव।
पाले कोई रखकर पूरण चाव।
उसी की तिर जावेगी नाव।

दोहा—प्रत्यक्ष में यह देखलो, पाया द्रव्य अपार।
श्रद्धा से यदि धारे कोई हो जावे उद्धार ।।मि.।।
नियम की महिमा हम गालें ।।१७।।

सेठ सब देख हृदय धारी।
स्वार्थ की दुनियां है सारी।
तारे नहीं द्रव्य अरु नारी।
सुगुरु ही जग तारण हारी।

दोहा—अतः यहां से सद्य जा, पकड़ गुरु चरणार।
लेकर संयम आतम तारु, होऊं भव जल पार ।।मि.।।
बात सब नारी कान डाले ।।१८।।

सुना तब नारी हुई इन्कार।
आप नहीं लेवें संयम भार।
आपका ही मेरे आधार।
और सब झूंठा है संसार।

दोहा—सेठ कहे सब ठीक है, यदि तुम्हारी चाह।
मेरे साथ में दीक्षा ले लो, यही है जीवन लाह ।।मि.।।
दीक्षा की बात नार टाले ।।१९।।

आखिर में आज्ञा सेठ लीनी।
अरज गुरु चरणों में कीनी।
शिक्षा गुरुदेव ने दीनी।
भाव युत दीक्षा ले लीनी।

दोहा—करणी करके सेठजी, पाया स्वर्ग विमान।
अतः भव्य जन चेतो सत्वर, लो जग को पहचान ।।मि.।।
आत्म नित संयम में चाले ।।२०।।

'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि गावे।
भावना उत्तम बन जावे।
वही जन मुक्ति पथ पावे।
संशय नहीं मन मांहि लावे।

दोहा—गुणताली आसाढ़ में, बुद्ध पांचम शनिवार।
ललवाणी स्वाध्याय भवन में, जोड़ करी तैयार ।।मि.।।
भव्य ही नियम शुद्ध पाले ।।२१।।

२१ | विषय कषाय

[तर्ज : नेमजी....]

अनादि से लगे साथ मांहि, तजो अब विषय कषाय भाई ।।टेर।।

जीव को रहे ये भटकाई ।
फेर भी संग तजे नांहि ।
लगे ज्यों रहा मधु रस पाई ।
किन्तु विष सम ये रहे छाई ।

दोहा जन्म मरण के बीच ये, ज्ञानी जन फरमाय ।
इनसे लख चौरासी जीव सब, रहे महादुख पाय ।।मि.।।
जीव की खो रहे कमाई ।।१।।

कमाई यदि रखना चावो ।
तो इनको घर से निकलावो ।
पुरोहित सम काम बनवावो ।
दामाद युक्ति से कढ़वावो ।

दोहा—कथा कहूं इस ऊपरे, सुनलो ध्यान लगाय ।
कैसा काम किया है इसने, लीज्यो हिरदय माय ।।मि.।।
जीव सुख शान्ति ले पाई ।।२।।

पुरोहित नगर मांहि नामी ।
विजय के नहीं धन की खामी ।
नार है सुन्दर गुण खानी ।
पुत्र एक पुत्री पंच पामी ।

दोहा—शादी कीनी चार की, पुत्र दिया परणाय ।
अच्छा घर वर देख उसे भी, रहा पिता परणाय ।।मि.।।
संबंधी सब ही गये आई ।।३।।

विवाह कर सबको पहुंचाये।
जंवाई चार रह जाये।
हमेशा माल खूब चाये।
जाने की मन में नहीं लाये।

दोहा—ससुर हृदय में सोचता, कहां तक ये घर खाय।
किंतु सास को प्रिय जंवाई, इससे बोला नाय ।।मि.।।
दिवस केई दिये बिताई ।।४।।

चारों ही बैठ बात कीनी।
उक्ती यह नीति में चीनी।
सोच भित्ति पर लिख दीनी।
ससुर ने उसको लख लीनी।

दोहा—कह्यो ससुर गृह स्वर्गसम, करे जंवाई वास।
ससुर लिखी यदि समझदार हो, छः दिन करो निवास ।।मि.।।
ज्यादा रहे मान हानि थाई ।।५।।

पढ़कर ध्यान दिया नाँहि।
ससुर के मन में यों आई।
ऐसे ये जाने के नांहि।
नार से अपनी दरसाई।

दोहा—मिष्टान्न स्थान पर आज तू, मोटा रोट बनाय।
घी युक्त रखना भाणे में, दीनी विधि बतलाय ।।मि.।।
सोकरे दीने जीमाई ।।६।।

जीमकर बड़ा यों मन लावे।
ये तो घर मांहि खावे।
तीनों को ऐसे दरसावे।
चलो अब अपने घर जावें।

दोहा—तीनों बोले क्या हुआ, घी युक्त भोजन खाय।
नीतिकार कहते हैं ऐसे, परान्न दुर्लभ पाय ।।मि.।।
रहो यहां जावो मत कांहि ।।७।।

रहूं मैं अब यहां पर नांहि।
रहा मणि राम दरसाई।

आज्ञा हित ससुर पास जाई।
बात वह अपनी बतलाई।

दोहा—राजी होकर ससुर ने, दीना अच्छा माल।
दर्शन देना ऐसे कहकर, पहुंचाया सरपाल ॥मि.॥
नार से आकर फरमाई ॥८॥

तेल युत रोट भाणे मांहि।
खिलाओ अब उनको यांहि।
कहा वैसा ही पुरसाई।
जीमते माधव मन आई।

दोहा—मित्रों अब रहना नहीं, जाना है निजग्राम।
दोनों सुनकर बोले ऐसे, करो यहां आराम ॥मि.॥
माधव कहे तेल गया आई ॥९॥

अरे! तुम समझे कुछ नाहीं।
सास यहां सोचो अच्छाई।
ठंड में तेल लाभदाई।
अतः रक्खा भाणे मांहि।

दोहा—अग्नि इससे तेज हो, खाना सब पच जाय।
अतः तेल तो खाना अच्छा, क्यों समझो दुःखदाय ॥मि.॥
माधव कहे मैं तो रहूं नांहि ॥१०॥

ससुर से आज्ञा वह लीनी।
सद्य ही आज्ञा दे दीनी।
सीख में पाई नहीं दीनी।
नमन कर राह उसने लीनी।

दोहा—दो जंवाई रह गये, कीना ससुर विचार।
पूछा नार से कब सोने हित, आते हैं हम द्वार ॥मि.॥
नार ने दीना दरसाई ॥११॥

ठिकाना इनका है नांहि।
पति कहे आज रात मांहि।
सोऊंगा द्वार पास जाई।
खोलूंगा द्वार इन्हें नांहि।

दोहा—दोनों खेल में मस्त हो, मध्य निशा में आय।
बड़े जोर से आवाज ऐसी, खोलो द्वार सुनाय ।।मि.।।
ससुर कहे द्वार खुले नांहि ।।१२।।

द्वार जहां खुला तुम्हें पावे।
वहीं पर जाकर सो जावें।
अश्व गृह खुला ही दिखलावे।
गये वहां स्थान नहीं पावे।

दोहा—अति ठंड से दोनों का, तन रहा कंपाय।
खरडी ओढ़ कर भू पर सोये, सारी रात दुःख पाय ।।मि.।।
सुबह कहे विजय राम भाई ।।१३।।

यहां अपमान हुआ भारी।
करो चलने की तैयारी।
दुःख से वीती रात सारी।
अब नहीं रहता मैं धारी।

दोहा—इच्छा तुम्हारी हां करो, मैं जाने को नांय।
विजय राम आज्ञा लेने को, ससुर पास में जाय ।।मि.।।
ससुर तो देखे भी नांही ।।१४।।

ससुर ने जाते लख लीना।
परामर्श वेटे से कीना।
उपाय एक उसे वता दीना।
पुत्र ने वैसा ही कीना।

दोहा—माधव जावे आज ही खाकर गहरी मार।
माल खा रहा मुफ्त में, शर्म न इसे लिगार ।।मि.।।
वक्त जब भोजन की आई ।।१५।।

वहनोई साला दोऊं लार।
भोजन को वैठे थे उस बार।
पिता आ बोला यों तत्कार।
दाम लिया यहां से सद्य निकाल।

दोहा—पुत्र कहे लीना नहीं, कहां से लाऊं जाय।
पिता हाथ में लकड़ी लेकर, उसको रहा दिखलाय ।।मि.।।
सौंप दे रुपया सद्य लाई ।।१६।।

दोनों में झगड़ा हुआ भारी।
पुत्र भी कर ली तैयारी।
छुड़ाऊं जामाता धारी।
वीच में वोला उस बारी।

दोहा—पुत्र हाथ में जूती लीनी, लट्ठ पिता के हाथ।
दोनों की जामाता ऊपर, पड़े मार वह खात ।।मि.।।
मार से गया वह घबराई ।।१७।।

केशव के मन में यों आई।
माल सब निकल गया यांहि।
लट्ठी अरु जूती सिर मांहि।
खाकर गया गहरा घबराई।

दोहा—युक्ति से दामाद को, निकलाया घर बार।
घर से पुरोहित गया राज में, लखकर कहे दरबार ।।मि.।।
देरी क्यों हुई दो बतलाई ।।१८।।

बात सब पुरोहित दरसाई।
भूप सुन हर्षा मन मांहि।
उपाय कर दीना निकलाई।
बुद्धि यहां खूब काम आई।

दोहा—प्रसन्न होकर भूप ने, दीना खूब इनाम।
इस कथा से समझो मित्रों! करो धर्म का काम ।।मि.।।
इसी में अपना हित भाई ।।१९।।

पुरोहित वत् जीव को मानो।
दामाद सम प्रमाद का जानो।
विषय अरु कषाय दुःख खानो।
निकालो घर से, सुख पानो।

दोहा—अनादि काल से संग में, ये दामाद घर खाय।
इन्हें समझ कर संगत छोड़ो, यदि हो सुख की चाय ।।मि.।।
करो स्वाध्याय रुचि लाई ।।२०।।

'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि चेताय।
करो नित ऐसा आप उपाय।
घुसे ये घर से बाहर जाय।
वीर वाणी से समझ में आय।

दोहा—गुणताली आसाढ़ में, वुद नवमी बुधवार।
हीरा बाग मूथा के बंगले, जोड़ करी श्री कार ।।मि.।।
स्थान यह जयपुर के मांहि ।।२१।।

२२ | बड़ों से प्रशंसा

[तर्ज : नेमजी ···]

प्रशंसा गुरुओं से चावे, आगे वह बढ़ने नहीं पावे ।।टेर।।

इन्द्रदत्त कलाकार नामी ।
नाम लिया जगति पर नामी ।
नहीं था उसका कोई शानी ।
कला का काम था लासानी ।

दोहा—सोमदत्त एक पुत्र है, करे कला अभ्यास ।
बना मूर्तियां अच्छी लाकर, रखे पिता के पास ।।मि.।।
पिता लख कमियां बतलावे ।।१।।

पुत्र सुन सूक्ष्म काम करता ।
कोरणी अच्छी वह भरता ।
सदा ही आगे रहा बढ़ता ।
ध्यान रख काम मांहि लगता ।

दोहा—फिर भी पिता कहता नहीं, अच्छा कीना काम ।
पुत्र विचारे करे प्रशंसा, पिता से मेरा नाम ।।मि.।।
काम ऐसा कर दिखलावे ।।२।।

कार्य वश पिता गांव जावे ।
पुत्र तब मन में यों लावे ।
कलाकार मूर्ति बनवावे ।
गुप्त निज नाम लिखवावे ।

दोहा—गणेश मूर्ति कोर कर, किया कला का काम ।
भूमि मांहि रखकर उसको, पुनः आ गया धाम ।।मि ।।
भेद इसका कोई नहीं पावे ।।३।।

पिता चल वापिस घर आया ।
पुत्र निज स्वप्न बतलाया ।
गणेश की प्रतिमा दिखलाया ।
भूमि में गढ़ी है दरसाया ।

दोहा—लोग वहां पर जाय के, खोदी भू तत्काल।
गणेश मूर्ति लखकर बोले, हो गये आज निहाल ।।मि.।।
कला की बात फैल जावे ।।४।।

देखने पिता पुत्र आये।
कला लख पिता यों दरसाये।
कैसी यह सुन्दर दिखलावे।
प्रशंसा कला की वो गावे।

दोहा—पिता कहे सुन पुत्र तू, कलाकार हुशियार।
कैसी सुन्दरता लाया है, देखो दृष्टि पसार ।।मि.।।
बात सुन पुत्र दरसावे ।।५।।

प्रतिमा मैंने बनवाई।
भूमि में मैं ही गढ़वाई।
नाम है इस पर मेरा ही।
पिता को दीना दिखलाई।

दोहा—पिता कहे तुझ काम में, देता कमी बताय।
जिससे तुझ में लगन बनी रहे, आगे बढ़ता जाय ।।मि.।।
तेरा अब बढ़ना रुक जावे ।।६।।

प्रशंसा तू मुझसे चाई।
भारी यह गलती तू खाई।
बड़ाई जो निज की चाई।
समझ लो अब बढ़ना नांहि।

दोहा—वचन पिता के श्रवण कर, पुत्र गिरा चरणार।
गलती की वह क्षमा याचना, कर रहा वारम्बार ।।मि.।।
भूल हुई निज की दरसावे ।।७।।

लगाता पुत्र काम मांहि।
खोल दिल करता दिन राई।
तथापि वैसा हो नांहि।
रुका तारीफ हृदय चाई।

दोहा—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, कहे यों वारम्बार।
निज प्रशंसा कभी न चाहो, यही ज्ञान का सार ।।मि.।।
कथा के भाव हिए लावे ।।८।।

२३ | नकली से असली बना

[तर्ज : राधे]

नकल करना जो जानता वह, असल एक दिन बन जाये ।
नहीं चाहे जो कभी नकल वह, नहीं असल भी बन पाये ।।१।।

जहां शाला में बालक जाते, पहले नकल कराते हैं ।
शनैः शनैः वे बालक एक दिन, असल रूप हो जाते हैं ।।२।।

अमरपुर का अमरसिंह नृप, शूरवीर रणधीर महान ।
दीन दुखी की रक्षा करता, प्रजाजनों पर पूरा ध्यान ।।३।।

अन्तःपुर में राणी धारणी, पति वल्लभ पतिभक्ता नार ।
पुत्री जिनके नाम सुशीला, सभी कला में है हुशियार ।।४।।

दोहा—यौवन वय में आ गई, पुत्री को लख मात ।
राज सभा में भेज दूं, समझे महिपति बात ।।१।।

श्रृंगारित हो राजकुमारी, सभा भवन में आई है ।
शिष्टाचार लख भूपति उसको, अपने पास बैठाई है ।।५।।

राजा सोचे भूल हुई यह, शादी योग्य हो गई बाई ।
राज काज में व्यस्त रहा मैं, नहीं ध्यान में यह आई ।।६।।

अतः योग्य वर देख कहीं पर इसका व्याह रचाना है ।
धार्मिक भावना है इसकी, वर धर्मात्मा ही लाना है ।।७।।

लाड़ प्यार कर निज पुत्री को, वापिस करी रवाना है ।
ज्यों ही आयी सुता मात ने, भेद सभी पहचाना है ।।८।।

दोहा—राजा राज के काम में, हो गया इतना व्यस्त ।
पता न कुछ भी लग सका, सूरज हो गया अस्त ।।२।।

अन्तःपुर में चलकर आया, राणी ने अरदास करी।
बड़ी हो गई पुत्री अपनी, हम सोते हैं नींद भरी ॥९॥
राजा बोला ठीक कह रही, नहीं ध्यान में यह आई।
निन्द्रा मेरी आज खुल गई, लख करके अपनी बाई ॥१०॥
कहां ढूंढने जावें दर दर, मेरे मन में यह आई।
गंगा तट पर रहे संन्यासी, योग्य देख दें परणाई ॥११॥
उसी वक्त में चोरी करने, चोर वहां पर चल आया।
कई संतरी पहरा दे रहे, उनका वह नहीं भय लाया ॥१२॥

दोहा—सुनी भूप की बात जब, तस्कर करे विचार।
जाकर संन्यासी बनूं, ब्याह होय मुझ लार ॥३॥

उस ही क्षण वह हुआ रवाना, गंगा तट पर आया है।
गृहस्थ के सब वस्त्र हटाकर, तन पर भस्म रमाया है ॥१३॥
सूर्योदय होते ही वहां पर, मंत्री गण कई आये हैं।
अलग अलग संन्यासी आगे, भाव सभी दरसाये हैं ॥१४॥

स्वीकृति मिलने पर राजा, निज पुत्री को ब्याहना चाहते।
किन्तु सुनकर सभी संन्यासी, नहीं! नहीं!! तब फरमाते ॥१५॥

आखिर में चलकर उस ही, संन्यासी पास में आये हैं।
उनको अपनी बात सुनाई, आशा दीप जलाते हैं ॥१६॥

दोहा—देकर स्वीकृति आप अब, सफल करे सब काम।
आज्ञा पाकर आपकी, हम जावें निज धाम ॥४॥

अरजी सुनकर मन्त्रीगण की, नहीं एक भी शब्द कहा।
मौन स्वीकृति लक्षण माना, पुनः राज का मार्ग गहा ॥१७॥
आकर भूप से हाल कहा, संन्यासी हां भरते नांहि।
एक एक से अरज करी पर, कोई ध्यान देते नांहि ॥१८॥
युवा संन्यासी मौन रहा, उसने हां या ना नहीं कही।
इससे हमने यही समझा है, लेंगे मान वे बात सही ॥१९॥
अतः आप जा उन्हें मनावें, काम सफल हो जायेगा।
यदि मान ले बात आपकी, भव्य काम बन जावेगा ॥२०॥

दोहा—चलकर भूप गया वहां, संन्यासी के पास।
करी प्रार्थना कह रहा, मानों हे गुण रास ॥५॥

सुनकर सोचे अहो! आज नृप, मेरे चरणों में आया।
वार वार कर अर्ज मेरे को, नम्र शब्द यह दरसाया ॥२१॥
जिसके आगे लोग सदा, कर बद्ध प्रार्थना करते हैं।
कृपा दृष्टि रक्खो हम पर, यों वारम्वार उच्चरते हैं ॥२२॥

वही भूप आ सन्मुख मुझको, हाथ जोड़कर मना रहा।
इसमें कारण क्या है यों, संन्यासी दिल में सोच रहा ॥२३॥

नकली वेश बना करके मैं, यहां पर आकर बैठ गया।
इससे ही नर नाथ पास आ, मम चरणों को पकड़ रहा ॥२४॥

दोहा—यदि असली बन जाऊं मैं, पा लेऊं शिवराज।
फिर तो मेरे जन्म का, सुधर जाय सब काज ॥६॥

पूरा राज्य अरु राजकुमारी, देता हूं नृप सुना रहा।
किंतु ध्यान में लीन संन्यासी, अब तक कुछ भी नहीं कहा ॥२५॥
संसार सराय में आ करके, जो इस मांहि फंस जाता है।
नर भव जैसा अमूल्य रत्न पा, व्यर्थ इसे खो जाता है ॥२६॥
मरते समय जीव यहां से, द्रव्य नहीं ले जाता है।
मूढ़ मनुष्य दिन रात दौड़कर, ऊमर यों ही गमाता है ॥२७॥
अब मुझको नहीं चाहे कुछ भी, यों खुद को समझाता है।
करूं भक्ति मैं सच्चे दिल से, ऐसा मन में लाता है ॥२८॥

दोहा—जिस वेश को पहन लिया, उसी मुआफिक चाल।
लज्जा रक्खूं वेश की, यही है सच्चा हाल ॥७॥

बोला भूप से यों संन्यासी, अब मुझको कुछ नहीं चावे।
राजकुमारी अरु राज्य भी, मेरे मन को नहीं भावे ॥२९॥
आया था मैं चोरी करने, राजन्! आप भवन मांहि।
तभी सुना दूं संन्यासी को, राजकुमारी परणाई ॥३०॥
नकली वेश बनाकर मैंने, यह चोला धारण कीना।
सोचा राजकुमारी से अब, ब्याह करूंगा रंगभीना ॥३१॥
किन्तु अभी यों मन में आया, यदि लालच में उलझाया।
होगा वेश बदनाम जगत में, इससे दिल में शरमाया ॥३२॥

दोहा—अतः नकल से असल बन, करूं आत्म कल्याण।
अब मुझको नहीं चाहिए, भौतिक कुछ सामान ॥८॥

कह कर ऐसे ध्यान मग्न हुए, भूपति समझ गया सारी।
धन्यवाद दे संन्यासी को, कहे आप ममता मारी ॥३३॥
बने नकल से असल आप, नृप ने तब यों गुण गाया है।
शत शत वंदन है मेरा, यों कहकर स्थान सिधाया है ॥३४॥
इसी तरह से समझो भव्यो! करो साधना चित्त लगा।
एक दिन ऐसा आयेगा जो, सुप्त आत्म को लेंगे जगा ॥३५॥
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, धर्म ध्यान करते जावो।
क्या फल होगा इसका हमको, दिल में शंका मत लावो ॥३६॥



२४ | पात्र में कचरा

[तर्ज : राधेश्याम]

संत सदा उपदेश सुनाते, फिर भी श्रोता ज्यों के त्यों।
नहीं ध्यान में आता कुछ भी, बने हुए हैं ऐसे क्यों ?
यही बात समझाने के हित, कथा एक बतलाऊंगा।
श्रोता गण सब सुनो ध्यान से, यही भाव समझाऊंगा ॥१॥
एक गांव का धनपति धन्ना, जनता मांही नामी था।
किस जगह खर्च करना पैसे को, इसका अच्छा ज्ञानी था ॥२॥
एक वक्त एक संत वहां पर, भिक्षा हित चलकर आये।
घर घर की भिक्षा लेते वे, धन्ना सेठ का घर पाये ॥३॥

दोहा—प्रेम सहित दी सेठ ने, उनको रोटी दाल।
उठा पात्र चलने लगे, कहे सेठ तत्काल ॥१॥

कई दिनों से थी इच्छा, हो पाई सफल आज मेरी।
संत चरण पड़ गये यहां, कुटिया पावन हो गई मेरी ॥४॥
कर जोड़ प्रार्थना करता हूं, अब पूरण आशा कर दीजे।
सोती आत्मा जाग उठे, ऐसा उपदेश सुना दीजे ॥५॥
संत कहे मैं अभी नहीं, एक हफ्ते बाद में आऊंगा।
तभी तुम्हारे उन्नत जीवन, हित की बात बताऊंगा ॥६॥
यह कह करके संत वहां से, अपने स्थान सिधाये हैं।
कब आये वह दिवस, सेठ के मन में भाव समाये हैं ॥७॥

दोहा—गिनते गिनते सेठ के, दिन वोहि गया आय।
संत आयेंगे आज घर, देऊं माल बनाय ॥२॥

खीर, मालपुवे, मेवे, फल, कई सामग्री तैयार करी।
देऊंगा मैं आज संत को, बैठा है वह आस धरी ॥८॥
आते संत ने रस्ते में कुछ, कचरा पात्र में डाल दिया।
बड़ी मस्ती से चलकर आते, देख सेठ हर्षाया हिया ॥९॥
हाथ जोड़ कहे बहुत देर से बाट आपकी देख रहा।
चलता चलता आया हूं संन्यासी ने यों शब्द कहा ॥१०॥

झोली से निकाल पात्र को, सेठ सामने धर दीना।
देख पात्र को सेठ सद्य ही, खीर पात्र लौटा लीना ।।११।।

दोहा—संत कहे यह क्या किया, लिया पात्र लौटाय।
सेठ कहे कचरा भरा, आप पात्र के मांय ।।३।।
बढ़िया खीर बिगड़ जायेगी, इससे मैंने हटा लिया।
फिर डालूंगा इसके मांहि, प्रथम पात्र को साफ किया ।।१२।।
यदि भूल से देता डाल तो विकृत हो जाती सारी।
बीदाम पिश्ता चारोली युत, खीर बिगड़ जाती सारी ।।१३।।
दिये पात्र में खीर माल पुवे, लेकर संत लगे जाने।
तभी सेठ कहे क्या करते हो, कदम लगे क्यों लौटाने ।।१४।।
कहा आपने आऊंगा तब, मैं उपदेश सुनाऊंगा।
आप जा रहे बिना सुनाये, शिक्षा फिर कब पाऊंगा ।।१५।।

दोहा—संत कहे उपदेश सब, दीना तुझे सुनाय।
सेठ कहे कब कह दिया, मैं तो समझा नांय ।।४।।
नहीं समझा तो समझ अभी, मैं फिर तुझको समझाता हूं।
खीर पात्र क्यों हटा लिया, यह प्रश्न सामने लाता हूं ।।१६।।
वह बोला उसमें कचरा था इससे मैंने हटा लिया।
माल कीमती बिगड़ जायगा, यदि कचरे में डाल दिया ।।१७।।
संत कहे जब पात्र साफ हुआ, खीर बाद में ही डाली।
शिक्षा रूपी खीर देऊं ले, अपने पात्र को निहाली ।।१८।।
काम क्रोध मद लोभ गन्दगी, कितनी पात्र में पड़ी हुई।
अनादि काल से गंदगी, ऐसी जीव साथ में लगी हुई ।।१९।।

दोहा—इसीलिए उपदेश का, असर न हो मन मांय।
हृदय पात्र जब साफ हो, तब उपदेश समाय ।।५।।
सेठ कहे सब सत्य बात है, मेरी समझ में अब आई।
जब तक पात्र शुद्ध नहीं होता, तब तक बात जमे नांहि ।।२०।।
एक शब्द भी नहीं कहा, व्यवहारिक ढंग से समझाया।
बात जमाकर सेठ हृदय में, संत स्थान पर सिधाया ।।२१।।
इस कथा से समझो यदि, वक्ता से कुछ लेना चावो।
ईर्ष्या भाव को तजो हृदय से, तभी आप उनसे पावो ।।२२।।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, अरि बैठे हैं निज घर में।
अब तक नहीं समझ पाये हम, मोह माया के चक्कर में ।।२३।।

दोहा—भगवद् वाणी के बिना, नहीं होगा यह ज्ञान।
अतः सदा स्वाध्याय का, रक्खो पूरण ध्यान ।।६।।



२५ | भावी

[तर्ज : खेल]

कोई नहीं जाने, भावी, क्या होसी इण संसार में ।। टेर ।।

भू मण्डल पर चमक रहा है, सुन्दर शहर अनूप ।
न्याय नीति का ज्ञाता त्राता ज्ञान सिंह है भूप जी ।।१।।
प्रजा जनों को माने पुत्र सम, करता सार संभार ।
दुख नहीं पावे मेरे नगर में, ध्यान रखे हर वार जी ।।२।।
उसी नगर में सुन्दर शाह एक, धन पति चतुर सुजाण ।
सेठाणी सुर सुन्दर घर में, पतिव्रता पुण्यवान जी ।।३।।
कभी सेठ ने भरे पोत सब, चले उदधि के मांय ।
सेठाणी को समझा कर सब, घर का काम वताय जी ।।४।।
चलते चलते जहाज द्वीप में, ठहर गये हैं आय ।
स्वयं उतर कर सेठ देख रहा, इधर उधर में जाय जी ।।५।।
पड़ी खोपड़ी मानव की लख, मन में किया विचार ।
छट्ठी रात में वे माता आ, लिखती अंक लिलार जी ।।६।।
इसे उठाकर देख लेऊं मैं, क्या है इसके मांय ।
विस्मित होकर पढ़ रहा उसको, साफ नजर में आय जी ।।७।।
अग्गे किं किं भविस्सई लख, लीनी अपने पास ।
आगे क्या होने वाला है, ध्यान पड़ेगा खास जी ।।८।।

गाथा--जम्मो कलिंग देशे, पाणिग्गहणं अंक देश मज्झम्मि ।
मरणं समुद्दतिरे, अग्गे किं किं भविस्सई ।।

लेकर अपने पास पेटी में, रख लीनी उस वार ।
पता लगाकर छोड़ूंगा मैं, अब क्या होवनहार जी ।।९।।
देखे हमेशा पेटी खोलकर, पड़ी मिले उण माय ।
समय निकलते वारह वर्ष हुए, घूमें द्वीपों मांय ।।१०।।

खूब कमा कर सम्पति वाणिज, आ गया अपने गाम।
सारा धन ला सौंपा नार को, कह दी बात तमाम ॥११॥

पेटी को रख अपने पास, नहीं दीना कुछ भी भेद।
नारी पूछे नहीं बतावे, हुआ नार मन खेद जी ॥१२॥

पेटी खोल लखे सेठ हमेशा, ताला देकर जाय।
सेठाणी मन में यों सोचे, क्या है इस के मांय जी ॥१३॥

भोजन करके देखे नित प्रति, नहीं भेद बतलाय।
नारी सोचे अवसर पाकर, देखूं यों मन लाय जी ॥१४॥

एक दिन जल्दी मांहि सेठ की, चाबी वहां गिर जाय।
काम जरूरी समझ शाह जी, त्वरित हाट पर जाय जी ॥१५॥

सेठाणी वहां झट आ देखे, चाबी नजर में आय।
आज फली है मनो भावना, मन मांहि हरसाय जी ॥१६॥

सदा सेठ जी किस पूंजी, को इतनी रहे संभाल।
खोल पेटी को आज देखलूं, क्या है इसमें माल जी ॥१७॥

सत्वर खोला देख रही वह, विस्मय मन में लाय।
मानव खोपड़ी इसका इतना, कैसे जतन कराय जी ॥१८॥

इतनी सार करे ये इसकी, होगी निश्चय प्यारी।
मेरे पर यह सौत बनाकर, रक्खी होगी लारी ॥१९॥

मृत्यु बाद भी खोपड़ी उसकी, रखते हैं संभार।
दर्शन करते नित प्रति इसका, समझ गई सब सार जी ॥२०॥

अब इसका मैं सद्य मिटा दूं, पूरा ही नाम निशान।
नहीं रहेगी चीज सामने, विसर जाय सब ध्यान जी ॥२१॥

सोच उसी क्षण सेठाणी ने, चूरण उसका कीना।
कई मसाले डाल खट्टी कर, भोजन बना रख दीना जी ॥२२॥

सेठ भाणे में खट्टी रख दी, खा करके हरसाया।
व्यंजन आज खट्टी का तुमने. कितना स्वाद बनाया जी ॥२३॥

सुनकर सेठाणी बोली, हां खट्टी क्यों नहीं भावे ?
अपनी प्यारी का खाना तो, सब ही मन से चावे जी ॥२४॥

रहस्य भरी इस चर्चा को नहीं, सेठ समझ कुछ पाया।
बोला सेठ नहीं समझ सका, तब उसने भेद बताया जी ॥२५॥

सुनकर सारी बात सेठ, मस्तक के हाथ लगाया।
आगे यह होने वाला था, भोजन संग खिलाया जी ॥२६॥

सेठ कहे यह पड़ी हुई थी, रत्नाकर की तीर।
पड़ी देख पेटी में इसको धरता मन में धीर जी ॥२७॥

सुनकर हाल सेठाणी सेठ से, क्षमा याचना कीनी।
शंका घुस गई मेरे मन में, बात सभी कह दीनी जी ॥२८॥

सेठ कहे मैं समझ गया, होना था आगे यह ही।
खड्डी बनकर आज खोपड़ी, गई पेट के मांहि जी ॥२९॥

अतः भावि को जान सके नहीं, कोई भी नर नार।
ले लो खरची पर भव की अब, सुनकर कथा विचार जी ॥३०॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, मौका नहीं हर बार।
सुनकर भव्यों चेतो जल्दी, कर लो आत्म सुधार जी ॥३१॥



२६ पक्का हांडा के गार नहीं लगे

[तर्ज : मांड]

हो श्रोतागण सारा वचन हमारा ।
लिज्यो हिरदय धार ।।टेर।।

कोमल दिल ने मोड़ लो रे,
सरल कह्यो जग मांय ।
कोरा कागज ऊपर रे,
लिखल्यो इच्छा श्राय ।।१।।
छोटा तरु ने जिस तरह रे,
करणो चाहो होय ।
वड़ो हुश्रा रा बाद में रे,
वदल सके नही कोय ।।२।।
एक नगर ना शाह जी रे,
धनदत्त नाम कहाय ।
पूंजी घणी है सेठ के घर,
नार मिली दुखदाय हो ।।३।।
बात बात में कलह मचावे,
रात दिवस घर मांय ।
तिलक सुन्दरी नामा पुत्री,
माता सम हो जाय ।।४।।
बात फैल गई घर घर मांहि ।
जाण गये नर नार ।
विवाह योग्य हो गई पुत्री ।
सोचे पिता हर वार ।।५।।
सेठ किसी से बात करे वह,
हो जावे इन्कार ।
चिन्ता छा गई गहरी दिल में,
किसके बांधू लार ।।६।।

आस पास सगपरण नहीं होवे,
जाऊं दूर विदेश ।
बात छिपी रह जायेगी वहां,
नहीं जाणे कोई रेश ।।७।।

दूर देश में सुन्दर कंवर से,
कीनी सेठ ने बात ।
सगपरण पक्का करके आया,
विवाह विधि रचवात ।।८।।

सुन्दर कंवर बारात बनाकर,
आया सेठ के द्वार ।
कंवरी स्वभाव की बात सुनी,
वह परण गया उस वार ।।९।।

ठाठ बाट से विवाह करी ने,
जा रहे अपने ग्राम ।
रस्ते मांहि सोचे सुन्दर,
ऐसा करूं मैं काम ।।१०।।

इसकी आदत अभी सुधारूं,
नहीं तो मुश्किल होय ।
वहां पर कौन कहेगा इसको,
हम हैं घर में दोय ।।११।।

गाड़ी भरी मिट्टी बरतन से;
आगे आगे जाय ।
खड़ बड़ कर रहे सुण सुन्दर ने,
ली लाठी कर मांय ।।१२।।

लगा फोडने बरतन बोला,
क्यों यह शोर मचाय ।
लोग कहे यह क्या करते हो,
बड़े पुरुष कहलाय ।।१३।।

वह बोला यह खड़ बड़ मुझको,
नहीं भाती है दाय ।

चाहे कोई बोले सामने,
दूंगा लट्ठ जमाय ॥१४॥

तिलक सुन्दरी मन में सोचे,
इनका और स्वभाव ।
पीहर की रही बात पीहर में,
यहां न चलेगा दाव ॥१५॥

मौन रहूंगी तभी ठीक है,
नहीं तो खाऊं मार ।
इस तरह यदि लट्ठ पड़े तो,
कौन ले सार संभार ॥१६॥

घर में आकर पति आज्ञा में,
रहती है हर बार ।
गल्ती नहीं हो जावे कुछ भी,
रखती खूब विचार ॥१७॥

पिता विचारे जाकर देखूं,
पुत्री का क्या हाल ।
यही सोचकर जनक वहां से,
आया पुत्री घर चाल ॥१८॥

पिता पुत्री से मिलकर पूछा,
कैसा तुम्हारा काम ।
पुत्री बोली चुपका रहिज्यो,
मत लीज्यो कुछ नाम ॥१९॥

सोचे पिता यों पुत्री बदली,
दीनी खूब समझाय ।
काम इशारे से सब हो रहा,
कहने की जरूरत नांय ॥२०॥

ससुर जंवाई से यों बोला,
मेरा कलह मिटाय ।
खांडी हांडी लाकर दीनी,
साबत करके लाय ॥२१॥

लोग कहे नहीं लागे गारा,
पक्की हांडी माय ।
जंवाई आगे बात सभी वह,
लोग कही दरसाय ॥२२॥

कहे जंवाई सासूजी भी,
पक्की हांडी समान ।
कितना ही उपाय करे अब,
नहीं आवेगा ज्ञान ॥२३॥

इस दृष्टांत से समझो भव्यों,
कोमल हृदय मांय ।
जैसा ज्ञान भरोगे वैसा,
उस मांहि भर जाय ॥२४॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे,
वीर वाणी का ज्ञान ।
जिन पुरुषों ने लीना इसको,
कर गये वे कल्याण ॥२५॥

दो हजार गुणचाली असाढ़ की,
सुदी तीज बुद्धवार ।
जोड़ करी पुरोहित बाग में,
तालेड़ा भवन मंझार ॥२६॥



२७ | नर भव

[तर्ज : छोटी····]

कठिन कठिन तर इस नर तन को पाया ।
किये अनन्ते पुण्य ज्ञानी फरमाया ।।टेर।।

दस बोलों का योग हाथ में आया ।
धर्म साधना करो गुरु फरमाया ।
गफलत में पाया मौका व्यर्थ गमाया ।
अंत समय वह हाथ मसल पछताया ।।मि.।।
बार बार यह सहज मिले नहीं भाया ।।१।।

एक गांव में दीन विप्र हरि सहाई ।
धन की कामना मन में रहे सदा ही ।
किसी व्यक्ति ने ऐसी बात सुनाई ।
रत्नाकर दे रत्न आप लो पाई ।।मि.।।
यह सुनते ही अति उत्साह मन में छाया ।।२।।

गया समुद्र के पास पानी उलचाया ।
क्या करते हो लोग उन्हें समझाया ।
किंतु धुन में नहीं एक सुन पाया ।
इसका श्रम लख देव वहां चल आया ।।मि.।।
खुश हो करके चिन्तामणी बक्षाया ।।३।।

कहा इसे लो गहरा लाभ कमाना ।
सावधान रह इसको सदा बचाना ।
प्रलोभन वश ठग से मति ठगाना ।
यह समझा कर हो गया देव रवाना ।।मि.।।
हर्षित हो अब ऐसे मन में लाया ।।४।।

मिल गया मुझे यह रत्न कमी कुछ नांहि ।
खूब करूंगा मौज मेरे मन चाई ।
बांध वस्त्र के छोर चला हरसाई ।
रस्ते मांहीं धर्म शाला एक आई ।।मि.।।
अच्छा स्थान लख भू पर वस्त्र बिछाया ।।५।।

सोते ही विप्र को गहरी निद्रा आई।
चोरों ने देखा आज हुई मन चाई।
कंकर बांध कर लीना रत्न चुराई।
ले चिंतामणी तस्कर गये सिधाई ।।मि.।।
उठा वहां से विप्र स्थान पर आया ।।६।।

पूछे लोग क्या लेकर वापिस आया।
कहे चिंतामणी रत्न कीमती लाया।
दिखलावो कैसा रत्न आपने पाया।
खोला उसको कंकर नजर में आया ।।मि.।।
लखकर पत्थर विप्र अति पछताया ।।७।।

रोकर बोला हाय चिंतामणी पाया।
सो गया वहां पर कीमती रत्न गमाया।
इसी तरह से समझो नर भव पाया।
चिंतामणी इसको ज्ञानी जन फरमाया ।।मि.।।
कितना किया पुरुषार्थ तभी यह पाया ।।८।।

संसार समुद्र में आतम नर भव पाया।
यह अमूल्य रत्न सभी पंथ बतलाया।
धर्मशाल परिवार संबंध कराया।
विषय कषाय यह तस्कर रूप बताया ।।मि.।।
आलस्य किया नर जो भी यहाँ ठगाया ।।९।।

तज कर प्रमाद को सावधान हो रहिज्यो।
चोरों से बचकर धर्म साधना कीज्यो।
नरभव रत्न पा स्वाध्याय रस पीज्यो।
अच्छा अवसर समझ सफल कर लीज्यो ।।मि.।।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि ने गाया ।।१०।।

दो हजार गुणचाली जेष्ठ शुभ आया।
सुद दशमी को अंगारवार मन भाया।
सांगानेर वा कुन्दन नगर सुखदाया।
ठाणा पांच के आनन्द मंगल छाया ।।मि.।।
वही तिरेगा धर्म में चित्त रमाया ।।११।।



२८ | ज्ञान की महिमा

[तर्ज : तावड़ा धीमो....]

ज्ञान की महिमा है भारी जी २
ज्ञान विना नर पशु सरीखा ज्ञानी उच्चारी ।।टेर।।

प्रथम ज्ञान पीछे दया सरे, यह जिनमत का सार ।
ज्ञान सहित किरिया करे तव, उतरे भव जल पार ।।१।।

एक सेठ कोटिपति घर में, सुन्दर कमला नार ।
रहे अनेकों मुनीम जिनके दास दासी परिवार ।।२।।

एक समय व्यापार काज वह, जावे विदेशां मांय ।
जहाज माल से भरे पांच सौ, संग में ली एक गाय ।।३।।

वहुत दूर पर पोत पहुंच गये, आया शहर भारी ।
कचन पुर को देख सेठ यों, मन मांहि धारी ।।४।।

करूं यहां व्यापार सोचकर, पोत लिये रुकवाय ।
सभी माल को समुद्र तट पर, लीना है उतराय ।।५।।

गाय देख नर विस्मित हो गये, यह जीव कांई ।
आज तलक नहीं देखा हमने है कैसा भाई ।।६।।

सेठ समझ गया रहस्य वात का, गऊ धन यहां नांहि ।
अतः भेंट में ऐसी चीज दूं, नृप विस्मय लाई ।।७।।

भरा कटोरा ले रवड़ी का, चला सभा मांहि ।
संग सेठिये केई साथ में, आये हरसाई ।।८।।

नमन करी नृप के सम्मुख आ, रखी भेंट लाई ।
अपना परिचय देय भूप को, सव ही दरसाई ।।९।।

भरा कटोरा देख सामने, नृप यों फरमाई ।
कैसी है यह भेंट सेठ जी, देवो वतलाई ।।१०।।

सेठ कहे यह फल है वृक्ष का, लाया भेंट तांई।
राजा बोला अनुपम फल यह, कैसे जाय खाई ।।११।।

कहां से तोड़ूं अब मैं इसको, देवो बतलाई।
खट्टा मीठा कैसा स्वाद है, इस फल के मांहि ।।१२।।

सेठ कहे झट उठा हाथ में, लो मुंह के मांई।
धीरे धीरे पीवो आप नहीं, बीज इणां मांही ।।१३।।

लगा होठ के नरपति पीवे, स्वाद गया आई।
सोचे मन में ऐसा फल तो, मैं खाया नांहि ।।१४।।

राजा बोला किया माफ कर, करो बणज यांही।
जितनी चाहो मिले मदद सब, लीज्यो मंगवाई ।।१५।।

ऐसे फल कितने हैं पास में, देवो फरमाई।
सेठ कहे है वृक्ष पास में, दूंगा फल लाई ।।१६।।

बहुत तरह के फल आते हैं, उस वृक्ष के मांहि।
समय समय पर भेंट करूंगा, मीठे फल लाई ।।१७।।

अब तो सेठ हर रोज बनाकर, लावे मिठाई।
पेड़ा पेठा मिश्री मावा दे, भांत भांत लाई ।।१८।।

खाते खाते नृप ने भेजी, अन्तःपुर मांही।
देख रानियां कैसा फल यह, विस्मय मन लाई ।।१९।।

खाते ही बंद गई सीक तब ठेठ उदर तांई।
ऐसे फल तो कभी न खाये, देना सदा लाई ।।२०।।

रहा जहां तक सेठ हमेशा, देता खूब लाई।
खाने वाले करें प्रशंसा, ऐसी नहीं खाई ।।२१।।

एक माह तक सेठ वहां पर, खूब करे व्यापार।
लाखों की वहां करी कमाई, कीना हिए विचार ।।२२।।

वापिस जाऊं अपने देश में, लेऊं घर संभार।
यही सोचकर आया सभा में, दीनी अर्ज गुजार ।।२३।।

अब जाऊं निज देश नाथ मैं, कर लीना व्यापार।
आप कृपा से रहकर मैंने, खूब किया रुजगार ।।२४।।

राजा बोला तुम जावो तो, वृक्ष हमें दे जाय।
सेठ कहे हो इच्छा राज की, लो यहां पर रखवाय ।।२५।।

भेजे सेवक लेने हित वहां, राजा हुक्म सुनाय।
सेठ कहे वैसा ही उसका, दो प्रबन्ध करवाय ।।२६।।

छोड़ गाय को सेठ वहां पर हुआ सद्य तैयार।
खूव खरीदा माल पोत में, भर लीना उस वार ।।२७।।

लाकर गाय को भूप पास आ, कह दीना सव हाल।
राजा वोला जो भी फल दे, ले आना तत्काल ।।२८।।

गाय किया पेशाव भूप को, ला दीना उस वार।
पीते थूंका भूप हृदय में, आया क्रोध अपार ।।२९।।

धोका देकर सेठ जा रहा, पकड़ लावो इस वार।
नकली वृक्ष दे असली को ले, जाता देश मंझार ।।३०।।

दौड़ संतरी पकड़ सेठ को, नृप के सन्मुख लाय।
रोष लाय नृप वोला ऐसे, धाखा देकर जाय ।।३१।।

कड़वे गंदे फल का वृक्ष तू, छोड़ यहां पर जाय।
माया करके अन्य वृक्ष दे, जरा शर्म नहीं आय ।।३२।।

मीठे फल का यही वृक्ष है, सेठ कहे तत्काल।
नहीं समझे तो अव समझा दूं इसका सारा हाल ।।३३।।

दूध निकाल गाय का वहां पर वनवाया जव माल।
खाकर समझा यही चीज है, नरपति पूरा हाल ।।३४।।

वस्तु वही पर ज्ञान विना नहीं, आस्वादन कर पाय।
अच्छी तरह से समझा तव ही, वना मिठाई खाय ।।३५।।

इसी तरह जिनवाणी रहस्य को, समझो गुरुजन पाय।
नहीं समझे तो योग मिला यह, सभी व्यर्थ में जाय ।।३६।।

अज्ञान अवस्था के कारण ही, जग में गोता खाय।
अत: समझ स्वाध्याय करो नित, ज्ञानी जन फरमाय ।।३७।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे गुरु शिक्षा लो धार।
हृदयंगम हो जाय अगर तो उतरोगे भव पार ।।३८।।



२९ | मदनरेखा चरित्र

[तर्ज : ख्याल की]

यह चरित्र अनुपम, मदन रेखा का सुनिये ध्यान से ।।

इसी भरत की भू पर प्यारा मालव नामा देश ।
वहां सुदर्शन शहर मनोहर, मणिरथ है भूपेश जी ।।१।।
लघुभ्रात युगबाहु जिनके, महागुणी नरवीर ।
मदनरेखा है पत्नी उनकी, परमगुणी गंभीर जी ।।२।।
मणिरथ के कोई पुत्र हुआ नहीं, सोचा मन के मांय ।
लघु भ्रात युवराज बनाकर, दीना काम संभलाय जी ।।३।।
दोनों बन्धव पूर्ण प्रेम से, रहे राज संभाल ।
सारी जनता परम सुखी है, घर घर मंगल माल जी ।।४।।
युगबाहु के पुत्र चन्द्रयश, बाल्य अवस्था मांय ।
योग्य हुआ वह सभी कला में, हुशियारी ली पाय जी ।।५।।
समयान्तर में सुख शय्या पै, अर्धरात के मांय ।
मयण रेहा को सुपने मांहि, पूर्ण चन्द्र दिखलाय जी ।।६।।
स्वप्न देखकर जागृत हो गई, पति पास में आय ।
मधुर गीत से जगा पति को, स्वप्न भाव दरसाय जी ।।७।।
पूर्ण चन्द्र को देखा मैंने, आज स्वप्न के मांय ।
बहुत विनय से सारी बातें, दीनी वहां सुनाय जी ।।८।।
युगबाहु कहे स्वप्न आपका, है अति आनन्द कारी ।
समय पूर्ण होने पर जन्मे, पुत्र महा सुखकारी जी ।।९।।
ओजस्वी तेजस्वी पुत्र की, होओगी महतारी ।
प्रिय मुख से प्रिय उत्तर पाकर, खुश हो गई है नारी जी ।।१०।।
सत्य वचन जो आप कहे, वह कर लीने स्वीकार ।
क्षमायाचना करके वापिस, आ गई महल मंझार जी ।।११।।
धर्म साधना करने के हित, बैठ गई उस बार ।
आया स्वप्न नहीं निष्फल होवे, सोचे हृदय मंझार जी ।।१२।।
भाग्यशाली है जीव उदर में, शुद्ध भावना पाय ।
धर्म साधना करने मांहि, चित्त सहज लग जाय जी ।।१३।।
सन्त सती के दर्शन करती, जिनवाणी मन भाय ।
धर्म कार्य नित अच्छा लगता, स्वाध्याय चितचाय जी ।।१४।।
अभय सुपात्र दान करें नित, शुद्ध भावना लाय ।
शुभ भावों में महाराणी के, दिवस रहे हैं जाय जी ।।१५।।

एक दिन राणी छत के ऊपर, नहाने के हित आय।
युगबाहु की पत्नी पर, नृप की दृष्टि पड़ जाय जी ॥१६॥
लखकर अनुपम रूप भूप के, हृदय वासना छाय।
उसे आज तक देख न पाया, रूप अति मन भाय जी ॥१७॥
मन में बस गई नार भूप के, सोचे सदा उपाय।
काम वासना से प्राणी की, मति भ्रष्ट हो जाय जी ॥१८॥
पुत्री सम मानी जाती है, लघु भ्रात की नार।
किन्तु विषय लोलुपी नृप को, ध्यान न रहा लिगारजी ॥१९॥
कामी नर अंधा कहलावे, सभी ज्ञान विसराय।
जाति पांति और ऊंच नीच का, भेद रहे कुछ नाय जी ॥२०॥
उसी समय वहां दक्षिण दिश से, रुद्रसेन भूपाल।
चढ़कर आया मणिरथ नृप पर, सेना लेय विशाल जी ॥२१॥
मणिरथ भी ले सेना साथ में, रणभूमि में जाय।
युगबाहु कहे मैं जाता हूं, आप यहीं रुक जांय जी ॥२२॥
युद्ध जीतकर आऊं जल्दी, यह है मेरा काम।
उनको ऐसा मजा चखाऊं, फिर नहीं लेवे नाम जी ॥२३॥
मणिरथ उसकी वात मानकर, खुशी हुआ अनपार।
यह मौका है सुन्दर, मेरा काम बने इस वार जी ॥२४॥
सोचा नृप ने मदनरेखा यहां, है एकाकी नार।
यदि करूं प्रयत्न सदा ही, सफल हो इस वार जी ॥२५॥
युगबाहु तो गया युद्ध में, नहीं कोई रखवार।
चतुर दासी को बुला पास में, समझाऊं सब सार जी ॥२६॥
दासी जाकर उसको मेरे, अनुकूल कर आय।
मेवा, मिठाई, वस्त्राभूषण, भेजूं देकर आय जी ॥२७॥
समझाकर दासी को सब कुछ, थाल दिया संभलाय।
सामग्री लेकर महलों में, रानी पास में आय जी ॥२८॥
वाणी मधुर बोलती दासी, चरणों में नम जाय।
महाराजा यह भेंट प्रेम से, भेजी आप लिराय जी ॥२९॥
मदनरेखा निष्कपट भाव से, सोचे यों मन मांय।
मुझे पुत्रीवत् समझ ज्येष्ठजी, सामग्री भिजवाय जी ॥३०॥
बालक सम निर्दोष हृदय से, कर लीनी स्वीकार।
भेद भाव नहीं समझ सकी, मन में है सही विचार जी ॥३१॥
दिल में किंचित पाप नहीं, अपने सम पर को जाने।
स्वयं दुष्टता रखे नहीं, नहीं बुरा और को माने ॥३२॥
कुछ समय बाद दासी को समझा, भेजा उसके पास।
जाकर चरण नमी और अपनी, कह दी बातें खास जी ॥३३॥

महाराजा की नजर पड़ी, तब ही से पीड़ित थाय।
अब तो कामना पूरी कर दो, महाराजा मन चाय जी ।।३४।।
ऐसे शब्द दासी के सुनकर, आँखें लाल हो जांय।
सिंहनी सम गरजकर बोली, यह क्या रही सुनाय जी ।।३५।।
जहर हलाहल कटु शब्द तू, लेकर यहां पर आई।
तुझे बोलते दासी ऐसे, जरा शर्म नहीं आई जी ।।३६।।
फिर मत कहना ऐसी बातें, लूंगी खींच जबान।
सुनकर दासी लगी कांपने, बिगड़ जायेगी शान जी ।।३७।।
डरते-डरते दासी भूप को, सारी बात सुनाय।
सिंहनी सम वह हाथ न आवे, शांति दिल में लाय जी ।।३८।।
कामी का मन रुके न जब तक, चरणपोष नहीं खाय।
बुरी नियत रखता है हर दिन, धन अरु धर्म गमाय ।।३९।।
चाहे कितना भी दुःख पावे, पर नहीं छोड़े काम।
नीच नीच से नीच काम भी, करे होय बदनाम जी ।।४०।।
मदनरेखा भी समझ गई है, जेठ नीति बदकार।
शील धर्म को भंग करन का, है उसका विचार जी ।।४१।।
अतः दूत के साथ पति को, वह पत्र पहुंचाय।
शत्रु जीतकर युगबाहु भी, राह मांहि मिल जाय जी ।।४२।।
करके नमन दूत ने सत्वर, पत्र दिया पकड़ाय।
पढ़कर पत्र को युगबाहु ने, ध्यान दिया कुछ नाय जी ।।४३।।
सेना साथ में है, युगबाहु कदली वन में आय।
स्वयं वहीं रुक सेना को तब, आगे दी भिजवाय जी ।।४४।।
आकर दूत ने मयणरेहा को, दीना हाल सुनाय।
शत्रु जीतकर सानन्द आ गए, रुके बगीचे मांय जी ।।४५।।
यह सुनते ही मदन रेखा भी, सत्वर वहां सिधाई।
आकर के उद्यान मांय, वह पति को शीश नमाई जी ।।४६।।
लेकर के विश्राम पति से, अपनी बात सुनाई।
ज्येष्ठ हृदय में पाप भरा, विश्वास योग्य ये नांहि जी ।।४७।।
किंतु युगबाहु के दिल में, हुआ नहीं विश्वास।
भाई ऐसा नहीं हो सकता, व्यर्थ करे बकवास जी ।।४८।।
मणिरथ सोच रहा यों मन, जब तक जीवित भ्रात।
तब तक मेरी नहीं बन सकती, यही है सच्ची बात जी ।।४९।।
'प्राज्ञ प्रसादे' सोहन मुनि कहे, कितना बुरा विकार।
भ्रातृ-स्नेह को भूल, मारन को, हो गया है तैयार जी ।।५०।।
किसी तरह भी युग बाहु को, पहुंचा दूं पर धाम।
रस्ता मेरा साफ होय, मिट जावे द्वन्द तमाम जी ।।५१।।

युगबाहु जब नहीं रहेगा, निश्चय वश में आय।
यहां से फिर यह कहां भगेगी, ऐसे मन में लाय जी ॥५२॥
मणिरथ करता है उपाय, अब जिससे हो विश्वास।
समझ सके नहीं भ्रात और, पहुंचा दूं यम के पास जी ॥५३॥
मालूम हुआ मणिरथ को यह, शत्रु जीत आ जाय।
कदलीवन में ठहरा हुआ है, निशा वहीं बिताय जी ॥५४॥
वहां अकेला अच्छा अवसर, नहीं चूकूं इस वार।
अंधकार छाया है गहरा, हुआ जाने को तैयार जी ॥५५॥
लेकर के तलवार हाथ में, कदली वन में आय।
आकर पूछा पहरेदार से, युगबाहु कहां पाय जी ॥५६॥
पहरेदार ने मणिरथ के ये, शब्द सुनी मन लाय।
मध्य निशा में यहां आकर, क्यों शब्द विचित्र सुनाय जी ॥५७॥
वह बोला हे नाथ ! अभी तो, शयन कक्ष के मांय।
सुख-शय्या पर शयन कर रहे, गहरी नींद छा जाय जी ॥५८॥
चौकीदार से कहा, त्वरित जा, उनको यह दरसाय।
महाराजा आये मिलने को, अभी रहे बुलाय जी ॥५९॥
आज्ञा पाकर उस ही क्षण, वह शयन कक्ष पर आय।
बाहर से आवाज लगाकर, रहा उन्हें दरसाय जी ॥६०॥
बुला रहे हैं नृपति आपको, सत्वर मिलना चाय।
यह सुनते ही मयणरेहा के दिल में, धोखा आय जी ॥६१॥
पतिदेव से बोली नाथ ! वहां, सावधान हो जाँय।
अभी यहां आने के कारण, खतरा रहा दरसाय जी ॥६२॥
अतः आपसे मेरी प्रार्थना, अभी नहीं वहां जांय।
कुछ समय निकलने बाद पधारें, भृत्य साथ ले जांय जी ॥६३॥
किन्तु युगबाहु ने उनकी, सुनी नहीं कोई बात।
व्यर्थ शंका यह मन में लावे, बुरे नहीं मुझ भ्रात जी ॥६४॥
युगबाहु सोचे यों मन में, शत्रु जीतकर आया।
इसी खुशी में मुझसे मिलने, बड़ बान्धव यहां आया जी ॥६५॥
अभी मिलूं मैं जाकर उनसे, भावी प्रबल कहाय।
मयणरेहा कहे जरा दूर से, रुख तो देख लिराय जी ॥६६॥
आए विपत्ति सन्मुख जिनके, सारी बात विसराय।
हित की बात कहे उसे तो, बहुत बुरी लग जाय जी ॥६७॥
शंकालु होती हैं नारियें, शंका व्यर्थ भराय।
सुनी अनसुनी करके वहां से, भ्रात मिलन को जाय जी ॥६८॥
उतर महल से नीचे आया, जहां भ्रात वहां जाय।
कदलीवन के दरवाजे पर, भ्रात खड़ा दिखलाय जी ॥६९॥

उन्हें पता क्या भ्रात हृदय में, कैसे भरे हैं भाव।
समझा दूध को दूध सही वह, नमाचरण धर चाव जी ।।७०।।
विष भरी तलवार गले पर, मणिरथ दीनी चलाय।
भ्रात घातकर महीपति वहां से, भगा नगर में जाय जी ।।७१।।
राह में महाभयंकर विषधर, सोता नींद के माय।
अश्व पैर से घायल कुपित हो, मणिरथ को डस जाय जी ।।७२।।
विषधर का विष फैला तन में, नरपति वहीं गिर जाय।
देह त्याग कर त्वरित आत्मा, दुर्गति मांहि जाय जी ।।७३।।
कितना पाप करे छिप करके, आखिर जाहिर हो जाय।
बुरे कर्म से भव-भव बिगड़े, ज्ञानी सच फरमाय जी ।।७४।।
युगबाहु के लगी जोर की, भूमि पर पड़ जाय।
मयणरेहा वहां आई दौड़ती, देख पति दुःख पाय जी ।।७५।।
देखा पति को श्वास गिन रहे, चन्द समय मेहमान।
हिम्मत रखकर कहे पति से, सुनलो देकर ध्यान जी ।।७६।।
आर्त्त ध्यान तज धर्म ध्यान में, मन को आप लगावें।
भाई पर नहीं द्वेष भावना, मन के मांहि लावें जी ।।७७।।
मेरी भी नहीं चिन्ता लावें, शील अखंडित पालू ।
चाहे जितनी आए विपत्ति, कुल रेखा पर चालू जी ।।७८।।
अरिहंत प्रभु में ध्यान रखें, और शरण प्रभु का धारें।
नवकार मन्त्र ही जपें हृदय में, झूठे नाते सारे जी ।।७९।।
कोई किसी का त्राण शरण हो, नहीं नजर में आय।
चार शरण ही रक्षक सच्चे, देवे पार पहुंचाय जी ।।८०।।
साज दिया है पति देव को, अपनी चिन्ता टार।
संलेखन-संथारा करवा, खोला स्वर्ग का द्वार जी ।।८१।।
खूब सुनाकर अन्त समय तक, जगा दिया धर्म राग।
धर्म ध्यान ध्याता युगबाहु, दिए प्राण को त्याग जी ।।८२।।
मदन रेखा ने सोचा मन में, ज्येष्ठ हृदय में विकार।
कभी अनिष्ट कर सकता है वह, छाया पापाचार जी ।।८३।।
अतः सद्य ही तजू नगर को, शील रक्षा के काज।
इसे पता नहीं सर्प दंश से, पर भव गए महाराज जी ।।८४।।
शरणा ले अरिहन्त प्रभु का, छोड़ चली परिवार।
रात अंधेरी अटवी भयंकर, लेती नाम नवकार जी ।।८५।।
इधर दोनों बन्धव की लाशें, एक अर्थी के मांय।
स्मशान भूमि में ले जा करके, दीनी आग लगाय जी ।।८६।।
युगबाहु का पुत्र चन्द्रयश, राजपाठ बैठाय।
उसी वक्त ही सारे राज्य में, आज्ञा दी फिरवाय जी ।।८७।।

मदनरेखा को शील धर्म की, रक्षा का है ध्यान।
और न चिन्ता मन में कुछ भी, जा रही वन दरम्यान जी ।।८८।।
कांटे कंकर लगे पैर में, रक्त बहे दुःख पाय।
जंगल भयंकर डरे अकेली, वन पशु सम्मुख आय जी ।।८९।।
दहाड़ शेर की सुनकर वन में, मन में रही घबराय।
महामन्त्र नवकार हृदय में, जपती आगे जाय जी ।।९०।।
प्राणी हिंसक मंत्र प्रभावे, कोई पास नहीं आय।
चलते-चलते सूर्योदय का, समय पास आ जाय जी ।।९१।।
गर्भकाल का समय आ गया, प्रसव पीड़ा हो जाय।
चन्द काल में इन्द्र कान्ति सम, पुत्र रत्न लिया पाय जी ।।९२।।
कर्मगति विचित्र जगत में, कहां से कहां ले जाय।
राजकंवर का जन्म हुआ है, सुनलो ध्यान लगाय जी ।।९३।।
क्या सोचे क्या होवे, क्षण में कोई पता नहीं पाय।
अतः कभी तन-धन-यौवन का, दर्प नहीं मन लाय जी ।।९४।।
वहां जंगल में कौन सार ले, पूछे कौन वहां आय।
एकाकी महाराणी वहां पर, सोच रही मन मांय जी ।।९५।।
कैसे कर्म किए हैं मैंने, पति वियोग हो जाय।
राजमहल, परिवार छूट गया, आ बैठी वन मांय जी ।।९६।।
काम स्वयं करती है सारा, आधा चीर रही फाड़।
झोली बना सुला बालक को, बांध दिया है झाड़ जी ।।९७।।
लटकाकर डाली से उसको, चली सरोवर पास।
जल से तन को स्वच्छ किया, धोती है वस्त्र गुणरास जी ।।९८।।
जल्दी जाकर उसे संभालूं, प्राणवल्लभ मुझ लाल।
दिल का टुकड़ा तरु पर लटका, क्या है उसका हाल जी ।।९९।।
'प्राज्ञ प्रसादे' 'सोहन मुनि' कहे, मातृ हृदय विशाल।
कैसी भी स्थिति होवे सम्मुख, करे सार संभाल जी ।।१००।।
नहीं समझे नादान मातृ ऋण, कैसे उसे चुकाय।
भूल गये हैं सारी बातें, उल्टा दुःख दे जाय जी ।।१०१।।
वापिस आते मारग मांहि, वन हस्ति मिल जाय।
प्यासा था मदमस्त बना, पानी पीने को आय जी ।।१०२।।
उठा सूंड में, बहुत जोर से, फेंका अम्बर मांय।
तभी गगन में विद्याधर का, विमान उड़ता आय जी ।।१०३।।
विद्याधर ने झेला उसको, विमान में बैठाय।
बोला उससे सुनो सुन्दरी, भय नहीं मन में लाय जी ।।१०४।।
हम दोनों ही मौज करेंगे, जग के सुख लें भोग।
तेरा मेरा सहज रूप से, अच्छा मिल गया योग जी ।।१०५।।

मेरे पास में कमी नहीं है, भोगें भोग सुख मांय।
इतनी बात सुनते ही उसका, हृदय गया घबराय जी ।।१०६।।
अरे कर्म ! तू इस जीवन में, कितने खेल खिलाय।
एक मिटा नहीं, दूजा सम्मुख, दुःख दौड़ा क्यों आय जी ।।१०७।।
दुःख शृंखला लग गई पीछे, अन्त नहीं दिखलाय।
कर्म बांधकर लाई साथ में, उनको कौन मिटाय जी ।।१०८।।
सोच रही विघ्नों के साथ में, केई विघ्न आ जांय।
किन्तु साहस रखकर मन में, आगे बढ़ना चाय जी ।।१०९।।
शील धर्म की रक्षा करते, चाहे प्राण भी जांय।
अभी धैर्य से काम लिया तो, सहज सफलता पाय जी ।।११०।।
पहले जैन मुनि के दर्शन, करू यह दिल में चाय।
विद्याधर कहे अच्छी बात कही, यह मेरे मन को भाय जी ।।१११।।
मेरे पिताजी जैन मुनि हैं, मैं वहां पर ही जाऊं।
मेरे मन की कह दी तुमने, दर्शन अभी कराऊं जी ।।११२।।
मुनिवर पास पहुंचकर दोनों, सविनय शीश नमाय।
विधिवत् वन्दन करके बैठे, चरण शरण के मांय जी । ११३।।
सोचे जिनवाणी सुनने की, गहरी मन में आय।
चार ज्ञान के ज्ञाता मुनिवर, महागुणी कहलाय जी ।।११४।।
दोनों को ही जान ज्ञान से, गुरु वाणी फरमाय।
ब्रह्मचर्य की व्याख्या करके, भिन्न भिन्न समझाय जी।।११५।।
सुनकर मणिप्रभ विद्याधर के, दिल में भाव जग जांय।
उसी वक्त वह खड़ा हो गया, नियम मुझे करवाय जी ।।११६।।
परनारी सेवन का मेरे, जीवन भर पच्चक्खाण।
स्वपत्नी की करू मर्यादा, रखू पूरा ध्यान जी ।।११७।।
मयणरेहा का व्रत लेते ही, चित्त शान्त हो जाय।
जो भी था भय मेरे दिल में, मिट गया मुनि पसाय जी ।।११८।।
इतने में ही वायु वेग सम, गगन ओर से आय।
ऋद्धि युक्त वहां देव देवी, परिवार साथ में लाय जी ।।११९।।
सामानिक सब भृत्यों संग में, देव सभा में आय।
पहले नमन महारानी को कर, फिर आगे वह बढ़ जाय जी ।।१२०।।
प्रदक्षिणा दे मुनि को वंदन, करके बैठा आय।
विद्याधर यह घटना लखकर, विस्मय मन में लाय जी ।।१२१।।
ऐसी घटना जीवन में नहीं, कभी नजर में आय।
मुनिराज से पहले नार को, क्यों वंदन कर जाय जी ।।१२२।।
विधिवत् वंदन कर मुनिवर को, विद्याधर दरसाय।
कृपाकरी कारण फरमावें, क्यों पहले नम जाय जी ।।१२३।।

पंचमहाव्रत धारी आपको, पीछे नमा यह आय।
इसका रहस्य बतलाकर मेरी, शंका दूर हटाय जी ॥१२४॥
हे मणिप्रभ ! मुनिवर बोले, सुनने ध्यान लगाय।
मणिरथ युगबाहु का जीवन, दीना उसे सुनाय जी ॥१२५॥
पूर्वभव का युगबाहु यह, इसका पति कहलाय।
मणिरथ ने तलवार वारकर, भू पर दिया गिराय जी ॥१२६॥
अन्तिम समय धर्म ध्यान से, खूब साज दिलवाय।
मोह भंगकर पतिदेव को, अरिहन्त शरण बतलाय जी ॥१२७॥
चार शरण ही इस जीवन को, भव से पार लगाय।
धर्मध्यान का भाता देकर, पतिव्रत धर्म निभाय जी ॥१२८॥
अन्तिम सांसें पूरी लेकर, देवगति में जाय।
अमर भवन में ऋद्धिशाली देव बना यह आय जी ॥१२९॥
सभी प्रताप धर्म पत्नी का, धर्म ही पार लगाय।
अत: प्रथम किया नमन बाद में, मुझको शीश झुकाय जी ॥१३०॥
सारी घटना सुनकर राणी, शांति मन में लाय।
पतिदेव की सद्गति हो गई, दिव्य देव बन जाय जी ॥१३१॥
अब मैं अपनी शंका पूछ लूं, मुनिवर से इस बार।
ऐसा अवसर कहां मिलेगा, मन में हुआ विचार ॥१३२॥
वंदन करके मुनिवर सन्मुख, अपनी बात सुनाय।
लटका शिशु को आई डाल पर, उसका हाल फरमाय जी ॥१३३॥
चार ज्ञान के धारक मुनिवर, सुत का हाल बताय।
हे महारानी ! मतकर चिन्ता, उचित स्थान पर जाय जी ॥१३४॥
पुण्यशाली उस पुत्ररत्न को, पद्मरथ नृप ले जाय।
मिथिला नगरी मांहि उसका, महोत्सव रहे मनाय जी ॥१३५॥
पालन पोषण करती राणी, हर्षित हो मन मांय।
ऐसे पुत्र से गोद भरी लख, फूली नहीं समाय जी ॥१३६॥
नाम संस्कार भी किया है, उसका नमिराज कहलाय।
सभी संबंधी प्रसन्न हो रहे, अत. शान्ति नृप पाय जी ॥१३७॥
सुर युगबाहु कहे रानी से, सेवा हो दरसाय।
मदनरेखा कहे आप मुझे, अब मिथिला दो पहुंचाय जी ॥१३८॥
अमर उसी क्षण निज शक्ति से, मिथिला में ले जाय।
राणी ने सतियों को देखा, स्थानक में चल आय जी ॥१३९॥
सब सतियों को वंदन करके, बैठी सभा के मांय।
अमृतमय वाणी सुन करके, वैराग्य मन में छाय जी ॥१४०॥
जग झूठा यों समझ सती ने, सोचा करूं कल्याण।
उसी वक्त सतियों से बोली, सत्य आप फरमान जी ॥१४१॥

मेरी भावना दीक्षा लेकर, कर लूं जन्म सुधार।
यह अवसर जा रहा हाथ से, विलंब न होय लिगार जी ॥१४२॥
जाति कुल सम्पन्न राणी को, दीक्षा दी तत्काल।
सती सुव्रता नाम रख दिया, षट्काया प्रतिपाल जी ॥१४३॥
दीक्षा ले सुव्रता सती ने, तप चालू कर दीना।
ज्ञान क्रिया दोनों के बल से, आत्म शुद्ध कर लीना जी ॥१४४॥
मिथिला में तब चन्द्रकला सम, बालक बढता जाय।
पुत्र प्रभावे शत्रु नृप भी, नमे भूप को आय जी ॥१४५॥
आठ वर्ष का हो गया बालक, कलाचार्य बुलवाय।
विनयवान, गुणवान कंवर नित नये ज्ञान को पाय जी ॥१४६॥
चन्द समय में बुद्धि बल से, सभी कला आ जाय।
कलाचार्य ला कंवर नमी को, नृप को दिया भुलाय जी ॥१४७॥
देख कंवर को भूप प्रसन्न हो, किया खूब सम्मान।
कलाचार्य को दिया खूब धन, पहुंचाया निज स्थान जी ॥१४८॥
बचपन बीता यौवन वय को, पाये राजकुमार।
परम विदुषी कन्याओं से, विवाह करे भूपाल जी ॥१४९॥
'प्राज्ञ प्रसादे' सोहन मुनि कहे, पुण्यवान जहां जाय।
आनन्द-मंगल वरते हर दिन, लोग सदा गुण गाय जी ॥१५०॥
योग्य राजकंवर को लखकर, नरपति करे विचार।
इसको सब जिम्मेदारी दे, लेलूं संयम भार जी ॥१५१॥
पुत्र काम करने लायक है, फिर क्यों देर लगाऊं।
करूं आत्म कल्याण समय क्यूं, अपना व्यर्थ गमाऊं जी ॥१५२॥
राज्याभिषेक कर दिया उसी क्षण, हो गए नृप नमिराय।
गुरु पास में आकर भूपति, दीक्षा ली अपनाय जी ॥१५३॥
न्याय नीति से करते हैं वहां, राज श्री नमिराय।
पूर्ण शांति है सभी प्रजा में, होवे नहीं अकाज जी ॥१५४॥
पर चक्री का भय नहीं मन में, सुख से करे निवास।
जैसा राजा वैसी प्रजा हो, यही कहावत खास जी ॥१५५॥
नरपति श्री नमि सांसारिक, सुख भोग रहा सानन्द।
किसी बात की कमी नहीं है, भूप पुण्य का कन्द जी ॥१५६॥
इधर चन्द्रयश राजा भी, आनन्द में राज्य चलाय।
सुदर्शनपुर में प्रजा सुखी है, नरपति के गुण गाय जी ॥१५७॥
नमीरथ राजा का पटहस्ति, मद मांहि आ जाय।
बंधन तोड़ धन जन को हनता, वन मांहि भग जाय जी ॥१५८॥
वहाँ से सीधा दन्ति सुदर्शनपुर, सीमा में आय।
इस बात का पता चन्द्रयश, भूपति को मिल जाय जी ॥१५९॥

श्रेष्ठ श्वेत एक हस्ति हमारे, जगल माँहि पाय।
अपने सरदारों को भिजवा, पकड़ उसे मंगवाय जी ॥१६०॥
हस्तिशाला माँहि करि के, दिया तुरन्त बंधवाय।
महावत को आज्ञा दे दीनी, अच्छा माल खिलाय जी ॥१६१॥
बात फैलते पट हस्ति का, पता नमि ने पाया।
उसी वक्त लिख पत्र दूत के, हाथों यहां भिजवाया जी ॥१६२॥
समझाई सब बात दूत को, हस्ति दो लौटाय।
लेकर पत्र तुरन्त दूत तब, सुदर्शनपुर आय जी ॥१६३॥
चन्द्रयश की सभा बीच में, दूत आ गया चाल।
अभिवादन कर पत्र भूप के, कर में दिया तत्काल जी ॥१६४॥
लिखा पत्र में पटहस्ति मुझ, आया तुम्हारे पास।
उसको जल्दी भेजो यहां पर, नृप आज्ञा है खास जी ॥१६५॥
इतने दिन हुए नहीं सुनना, आप ओर से आय।
अतः पत्र के पढ़ते ही दो, पटहस्ति भिजवाय जी ॥१६६॥
नहीं तो होगा कटुफल इसका, सुनिये ध्यान लगाय।
जिसके जिम्मेदार आप ही होंगे, स्पष्ट दिया लिखवाय जी ॥१६७॥
उसी वक्त कर लाल नेत्र यों, चन्द्रयश फरमाय।
अरे दूत जाकर कह देना, अपने मालिक तांय जी ॥१६८॥
यदि मार्ग में रत्न मिले तो, वापिस नहीं लौटाय।
हस्ति शाला में बंधा हुआ है, हिम्मत हो ले जाय जी ॥१६९॥
इस पर भी सन्तोष न होवे, करिये जो मन चाय।
जिसको मिले उसी की वस्तु, जग मांहि कहलाय जी ॥१७०॥
अपमानित कर खूब दूत को, वहां से दिया लौटाय।
दूत खिन्न हो सत्वर वहां से, मिथिला में आ जाय जी ॥१७१॥
सभाभवन में नमिराज को, बीतक बात बताय।
अभिमानी राजा ने ऐसे, दीनी बात बढाय जी ॥१७२॥
हस्तिरत्न मुझ पास आ गया, कैसे दूं लौटाय।
अपमानित कर मुझको वहां से, दीना सद्य भगाय जी ॥१७३॥
उद्दंडता सुन चन्द्रयश की, नृप को क्रोध आ जाय।
सेनापति बुलाए तत्क्षण, आज्ञा उन्हें सुनाय जी ॥१७४॥
जल्दी करो तैयारी यहां से, चतुरंगिणी लो लार।
महाभयंकर युद्ध करन हित, हो जावो तैयार जी ॥१७५॥
सेनापति कर सब तैयारी, भूपति सम्मुख आय।
सभी तरह से सेना हाजिर, आप पधारें राय जी ॥१७६॥
सेनापति की बात श्रवणकर, नृप सेना में आय।
अस्त्र-शस्त्र सब सजा लिए हैं, चले स्वयं महाराय जी ॥१७७॥

कूच किया सेना ने सुख से, सुदर्शनपुर में आय।
चारों ओर से घेरा नगर को, डेरा दिया लगाय जी ॥१७८॥

चन्द्रयश ने जान लिया है, घेरा दिया है डाल।
नमीरथ नृप चढ करके आया, सुन लिया सारा हाल जी ॥१७९॥

चन्द्रयश भी सेनापति को, दे दीना आदेश।
सत्वर सेना लेकर चलना, देर करो मत लेश जी ॥१८०॥

रणशूरा सेना ले आया, रणक्षेत्र के मांय।
दोनों की तैयारी हो गई, शक्ति देवे दिखाय जी ॥१८१॥

रणभेरी बज उठी जोर से, सुनी वीरता छाय।
कायर मानव सुनकर वहाँ से, स्वयं भागना चाय जी ॥१८२॥

सती सुव्रता जान युद्ध को, सोचे मन के मांय।
अरे!....अनर्थ होयेगा भारी, भ्रात भ्रात रण मांय जी ॥१८३॥

बिना गुनाह ही प्रजाजनों की, मृत्यु होय बेकार।
पता नहीं है कौन सामने, लड़ने को तैयार जी ॥१८४॥

अतः यहाँ से जाकर उनको, समझाऊं तत्कार।
आ गुरुणी से अर्ज करी, मैं जाऊं युद्ध मंझार जी ॥१८५॥

चाहिए आज्ञा मुझे आपकी, सुव्रता अर्ज सुनावे।
गुरुणीजी ने आज्ञा दीनी, सतीयुगल साथ में जावे जी ॥१८६॥

आज्ञा पाकर हुई रवाना, रणभूमि में जाय।
नमिरथ राजा देख दूर से, सन्मुख चलकर आय जी ॥१८७॥

वंदन करके अर्ज गुजारे, कैसे आप पधारे।
कारण क्या है रणभूमि में, कह दो भाव हो सारे जी ॥१८८॥

महासती उपदेश रूप में, नमीरथ को समझाय।
एक हाथी के लिए हजारों, मानव क्यों मरवाय जी ॥१८९॥

दया धर्म क्यों निकला दिल से, सोचो कुछ महाराय।
नम्र भाव से नमिरथ बोला, प्रश्न करि का नाय जी ॥१९०॥

यहां मान-सम्मान साथ है इज्जत का सवाल।
इसी बात पर लड़ते हैं नृप, और न कोई चाल जी ॥१९१॥

अपनी प्रतिष्ठा राजनीति हित, युद्ध करे भूपाल।
ऐसे युद्ध होते आए, मत करिये आप खयाल जी ॥१९२॥

महासती सुव्रता जी कहे, बड़ बन्धव के साथ।
छोटा भाई करे लड़ाई, क्या यह न्याय की बात जी ॥१९३॥

यह सुनते ही नमिरथ राजा, चौंक पड़े तत्काल।
किस तरह चन्द्रयश मुझ बन्धव, मैं समझ सका नहीं हाल जी ॥१९४॥

पूर्वकाल का महासती ने, दीना हाल सुनाय।
हे राजन्! असली माता हूँ, संशय दूर हटाय जी ॥१९५॥

चन्द्रयश महाराजा निश्चय, वड़ बन्धव कहलाय।
सती वचनों पर नमीराज को, दृढ़ श्रद्धा हो जाय जी ॥१९६॥

उस ही क्षण आदेश सुनाकर, युद्ध बन्द करवाय।
क्षमा मांगने वड़ बन्धव से, लघुभ्राता रहा जाय जी ॥१९७॥

प्रमुख जनों को अपने साथ में, ले लीने नरराय।
बिना सवारी पैदल जावे, हर्षित हो मन मांय जी ॥१९८॥

युद्ध-विराम करा सती जी, चन्द्र पास में आय।
अनायास लख सती मात को, स्वयं सामने जाय जी ॥१९९॥

'प्राज्ञ प्रसादे' सोहन मुनि कहे, महासती प्रभाव।
अनेक मानव बचे मृत्यु से, फैली खुशियां चाव जी ॥२००॥

सती पधारी कैसे यहाँ पर, विस्मय मन में लाय।
विधिवत् वंदन करके राजा, खड़ा हो गया आय जी ॥२०१॥

महासती उपदेश रूप में, नृप को यों समझाय।
पूर्वकाल का परिचय देकर, अपनी बात सुनाय जी ॥२०२॥

नमीरथ नृप और तुम दोनों ही, मेरे हो अंगजात।
दोनों बन्धव लड़ो परस्पर, अच्छी नहीं है बात जी ॥२०३॥

बिना मतलब ही लोग हजारों, काल गाल में जाय।
महा अनर्थ होता है इससे, जीव नर्क गति पाय जी ॥२०४॥

चन्द्रयश राजा को सती की, बात ध्यान में आय।
जिस राजा से लड़ने आया, वह लघुबन्धव थाय जी ॥२०५॥

उस ही क्षण सब जोश भूप का, झट ठंडा हो जाय।
प्रेम भर गया गहरा मन में, मिलूं भ्रात से जाय जी ॥२०६॥

इधर चन्द्रयश मिलने जा रहा, नमि उधर से आय।
बीच मार्ग में दोनों मिल गए, गहरा आनन्द छाय जी ॥२०७॥

लघु बन्धव ने शीश झुकाया, अग्रज ने उसे उठाया।
भ्रातृ प्रेम चित्रण की शक्ति शब्द कवि नहीं पाया जी ॥२०८॥

मधुर मिलन से दोनों के नयनों में अश्रु आय।
जिसने देखा बन्धु मिलन वे, नेत्र आर्द्र हो जाय जी ॥२०९॥

दोनों ओर के जयनादों ने, अम्बर दिया गुंजाय।
दोनों बन्धव उसी हस्ति पर, बैठे मन हर्षाय जी ॥२१०॥

नगर निवासी सारे नगर को, दीना खूब सजाय।
स्थान-स्थान पर द्वार बने, दोनों की जय लिखवाय जी ॥२११॥

अमरपुरी सम शोभा लखकर, जन-जन आनन्द पाय।
गाजे-बाजे से खुशी साथ में, राज्य मांहि ले आय जी ॥२१२॥

दोनों बन्धव स्नेहपूर्वक, बैठे सिंहासन जाय।
तभी चन्द्रयश के दिल मांहि, ऐसी भावना आय जी ॥२१३॥

यह संसार असार भार सम, मुझे रहा दिखलाय।
अतः इसी क्षण तजकर इसको, संयम लूं अपनाय जी ॥२१४॥

करी मन्त्रणा मंत्रीगण से, तज करके संसार।
आत्म साधना करके अपना, जीवन लेऊं सुधार जी ॥२१५॥

अपना सारा राजभार, नमिराय को दिया सम्भलाय।
चन्द्रयश नृप बड़े हर्ष से, गुरु पास आ जाय जी ॥२१६॥

चढ़ते भाव से दीक्षा लेकर, संयम में चित्त स्माय।
ज्ञान-साधना करके तप में, जीवन दिया लगाय जी ॥२१७॥

दो राज्यों को नमिरथ राजा, सानन्द रहे संभाल।
सभी प्रजाजन सुख से अपना, जीवन रहे निकाल जी ॥२१८॥

कई वर्षों के वाद भूप के, दाह ज्वर हो जाय।
उस पीड़ा से व्याकुल हो नृप, कई वैद्य बुलवाय जी ॥२१९॥

अनेक विधि से करी चिकित्सा, शांति नहीं हो पाय।
ज्यों-ज्यों करे दवाई त्यों-त्यों, पीड़ा बढ़ती जाय जी ॥२२०॥

मंत्र-यंत्र एवं जादू-टोना, कोई काम नहीं आय।
प्रयोग सारे फेल हो गए, वेदना बढ़ती जाय जी ॥२२१॥

लेप किया बावन्ना चन्दन, सारे तन के माय।
उससे नृप को शान्ति मिली, कुछ सांस चैन की पाय जी ॥२२२॥

अन्तःपुर की सभी रानियां, चन्दन घिसे हरषाय।
किन्तु भूप को कंकण ध्वनि से, कष्ट हुआ दिल मांय जी ॥२२३॥

अखरे श्रुत को बाधा नींद में, ध्वनि रही पहुंचाय।
इससे महीपति के चित्त मांहि, बेचैनी बढ़ जाय जी ॥२२४॥

भृत्यों से महीपति ने पूछा, ध्वनि कहाँ से आय।
इससे मन में बढ़े अशान्ति, निद्रा दूरी जाय जी ॥२२५॥

तभी भृत्य वह नम्र शब्द में, नृप को यों दरसाय।
स्वयं रानियां चन्दन घिस रही, कंकण रहे टकराय जी ।।२२६।।

कंगन की यह ध्वनि हो रही, सुनिये श्री महाराज।
नरपति ने आदेश दिया यों, बंद करो आवाज जी ।।२२७।।

सभी रानियां यह सुनते ही, कंकण दिए निकाल।
सौभाग्य रूप निज करके मांहि, एक-एक लिया डाल जी ।।२२८।।

उसी समय वह कर्ण कटु ध्वनि, सहज बंद हो जाय।
इससे रुग्ण भूपति मन को, अति शांति मिल जाय जी ।।२२९।।

भृत्य पास में बुलाके पूछा मुझे सही बतलाय।
चन्दन घिसना बंद किया क्या, कंकण ध्वनि नहीं आय जी ।।२३०।।

तभी भृत्य कर जोड़ नम्र हो, ऐसी बात सुनाय।
चन्दन अब भी घिसा जा रहा, कारण वह दरसाय जी ।।२३१।।

अनेक कंकण थे कर मांहि, उनको दिया उतार।
एक-एक कंकण पहना कर में, सभी आपकी नार जी ।।२३२।।

इस कारण से कंकण ध्वनि, अब नहीं कान में आय।
दो में है टकराव उक्ति है, शान्ति एक में पाय जी ।।२३३।।

यह सुनते ही नमिराय जी, सावधान हो जाय।
अरे आत्म ! एकाकी रह तू, शांति उसी में पाय जी ।।२३४।।

सोचे राजा यदि मेरा यह, दाह ज्वर मिट जाय।
आत्म शांति हित तब एकाकी, बिचरूं मैं सुख मांय जी ।।२३५।।

सारे राज्यभार को तजकर, देऊं ममत्व हटाय।
जगज्जाल के निकल फंद से, दीक्षा लूं अपनाय जी ।।२३६।।

महीपति को यह बोध स्वयं का, जब दिल में हो जाय।
उसी वक्त सब तन में आया, दाह रोग मिट जाय जी ।।२३७।।

मानो कुछ भी रोग ना हुआ, मात्र स्वस्थ हो जाय।
उसी वक्त सब कुटुम्बियों को, लीने पास बुलाय जी ।।२३८।।

मनोभावना जाहिर करने, अपनी बात सुनाय।
रानी, स्वजन और सभी संबंधी, सुनलो ध्यान लगाय जी ।।२३९।।

शान्ति अनुभव हो रही मुझको, रोग सभी विरलाय।
आज स्वप्न में खूब स्वच्छ मेरु पर्वत दिखलाय जी ।।२४०।।

इस पर्वत का विचार करते, जाति स्मरण हो जाय ।
जाति ज्ञान से स्पष्ट पूर्व भव, मुझे रहा दिखलाय जी ॥२४१॥

पूर्वजन्म में साधु धर्म से, सुरगति लीनी पाय ।
वहाँ का आयु पूर्णकर यह जीव यहां पर आय जी ॥२४२॥

अब मैं यहाँ पर दीक्षा लेकर, भव फेरा दूं टाल ।
मेरी आत्मा सिद्ध-बुद्ध बन, काटे सब जंजाल जी ॥२४३॥

उस ही क्षण नृप बुला पुत्र को, राज्य दिया संभलाय ।
आप स्वयं लुंचनकर सिर का, दीक्षा ली अपनाय जी ॥२४४॥

सब कुटुम्ब को छोड़ बिलखता, जैन मुनि बन जाय ।
अप्रतिबंध विहारी बनकर, वन खंड मांहि जाय जी ॥२४५॥

स्वयं इन्द्र ब्राह्मण का रूप धर, मुनि पास में आय ।
केई प्रश्न किए हैं उसने, उत्तराध्यान के मांय जी ॥२४६॥

अन्त ऋषीश्वर नमिराय ने, मोक्ष स्थान लिया पाय ।
आवागमन का राह बंद कर, जन्म-मरण मिटाय जी ॥२४७॥

क्रियापात्र आचार्य गुरुवर, नानकराम जी महाराज ।
जिनकी सम्प्रदाय के मांहि, त्यागी-तपासी मुनिराज जी ॥२४८॥

सौ साधु एक माधव मुनिवर, इसी गच्छ के मांय ।
पांच विगय को त्याग अठाई, करे निरन्तर महारायजी ॥२४९॥

अनेक सन्तों में सन्त गुरुवर, पन्नालाल जी उपकारी ।
सार्वजनिक अरु समाज के लिए, कार्य किए हितकारी जी ॥२५०॥

तासु चरण रज सोहन मुनि कहे, जपो सदा नवकार ।
संवर, सामायिक अपना जीवन में, करो सफल अवतार जी ॥२५१॥

卐卐